व्यक्तित्व और विचार

गुरु नानक

गुरु नानक व्यक्तित्व और विचार

डा० सीता हाँडा

चिन्मय प्रकाशन

● गुरु नानक व्यक्तित्व और विचार

● लेखिका व सम्पादिका

डा० सीता हाँडा

● प्रकाशनाब्द

गुरु नानक पंचशताब्दी वर्ष

● मूल्य

५.५०

● प्रकाशक

चिन्मय प्रकाशन

चौडा रास्ता,
जयपुर–३

● मुद्रक

दी यूनाइटेड प्रिन्टर्स
जयपुर–३

है कि वह धर्म, जिसमे मनुष्य के दैनिक जीवन और सामाजिक आचरण मे न्याय सगत व यथोचित धैर्यता, गूढता, भक्ति परायणता व भगवान के प्यार के उपदेश का समावेश है, अवश्य ही सहानुभूति पूर्वक अध्ययन के योग्य है। सिक्खो की प्रतिनिधि सस्थायें गुरु नानक के सदेश को जनता के आम आदमी तक पहुचाने मे सफल नही हो पाई हैं। गुरु नानक ने पहिले के किसी भी धर्म या पीर-पैगम्बर की आलोचना नही की। उनका विश्वास था कि सब धर्म भगवान तक पहुँचने के भिन्न भिन्न रास्ते हैं, लेकिन साथ ही साथ उन्होने धर्म का एक निश्चित और नवीन दृष्टिकोण सबके सामने रखा जिसको समझना व पालन करना सरल था। मिस्टर आरनोल्ड टोयनबी ने "Sacred Writings of the Sikhs" नामक पुस्तक के प्राक्कथन मे लिखा है कि मनुष्य जाति का धार्मिक भविष्य भले ही अस्पष्ट हो परन्तु एक बात अवश्य सामने दिखाई देती है कि आज के इस युग मे जब कि सारे विश्व व मनुष्य जाति मे सन्देश वाहन के साधन बढ रहे हैं जितने भी उच्च धर्म हैं वे एक दूसरे को पहिले से अधिक प्रभावित करेंगे और आने वाले समय मे सिख धर्म, के धर्म ग्रन्थ (आदि ग्रन्थ) विश्व के लिये विशेष मूल्यवान सिद्ध होगे। यह धर्म स्वय ही दो परम्परागत धर्मों के बीच एक उत्पादक आध्यात्मिक सव्यवहार का स्मारक है जो अनेक कारणवश अब तक जनता के सामने नही आ पाया है। गुरु नानक के पाँच सौ साला पर्व ने एक ऐसा अवसर प्रदान किया है जिससे जनता का ध्यान इस व्यावहारिक धर्म की ओर आकर्षित हुआ है।

मुझे विश्वास है कि इस पुस्तक का उन पाठको द्वारा, जो गुरु नानक के धर्म व उनके सिद्धान्तों को जानने को उत्सुक हैं, उत्साह पूर्वक स्वागत होगा। मैं डा० सीता हांडा को उनके इस कार्य के लिये बधाई देता हूँ व उनको सफलता की कामना करता हूँ।

हुकुम सिह

अपनी बात

बातें तो बहुत सी हैं जिनसे मुझे गुरु नानक पर पुस्तक लिखने की प्रेरणा मिली,परन्तु मैं यहा कुछ ही शब्द इस बारे मे लिखूगी । मैं, उस महान् सत की वाणी के उस महान् श्लोक "सचहु उरै सभ को, ऊपर सच्च आचार" से, जिसमे सत्य के आचरण को सत्य से श्रेष्ठ बताया, बहुत प्रभावित हुई । हमारा देश उपदेशको से तो भरपूर है, पर उन्हे आचरण की कसौटी पर खोटा उतरता देख जी क्षुब्ध हो जाता है । 'लगर' की प्रथा जो सत ने चलाई, उसके बारे मे सोच कर आश्चर्य होता है कि जो कार्य आज न तो कानून कर सकता है, न बडे-बडे नेताओ के भाषण कर सकते हैं वह उस सन्त ने एक बहुत सरल तरीके से ५०० वर्ष पहिले कर दिखाया, जिसमे न नीच-ऊंच है, न जाति-भाव है, न कही प्रदेश आता है और न बोली—एक पक्ति मे हरिजन, हिन्दू, मुसलमान इत्यादि बैठ कर एक साथ एक तरह का भोजन करते हैं जिसकी व्यवस्था के पीछे केवल बनाने वाली कुछ स्त्रियो का स्वार्थहीन स्नेह है; और यही बात दृष्टिगोचर होती है गुरुद्वारे मे जब सब एक साथ बैठ कर भगवान का भजन करते हैं, कोई यह नही पूछता कि तुम किस से लौ लगाए बैठे हो । किस और देश मे, किस और धर्म मे राष्ट्रीय एकता, समाजवाद और भावात्मक एकता की ऐसी व्यवस्था मिलेगी ? फिर लीजिए उनके सासारिक जीवन और आध्यात्मिक जीवन के समन्वय को—अपने जीवन के अन्तिम १८ साल, आध्यात्मिकता की चरम सीमा पर पहुच कर, उन्होने एक मामूली कृषक की तरह बिताए । योग और कर्म का इससे बडा और कोई उदाहरण मिल सकता है ? ऐसे महान् दिव्य योगी को मेरा शनश नत मस्तक प्रणाम ।

यह थी मेरी बात । वैसे कौन यह नही जानता कि गुरु नानक एक युगपुरुष, महान् चिंतक, राष्ट्रीय एकता के प्रतीक, समाज-सुधारक उपदेशक, अहिंसा के पुजारी, मानवता के सदेश-वाहक एवं महान् सत थे जिनका एक मात्र उद्देश्य मानव को अज्ञान, पाखड और बाह्याचारो के गहन अन्धकार

के गर्त्त से निकाल कर ज्ञान के उज्ज्वल प्रकाश मे लाना था । उन्हे तो समाज से ऊ च-नीच, छुआछूत, जातिवाद, परस्पर वैमनस्य आदि की भावनाओ को दूर कर भक्ति-मार्ग द्वारा अध्यात्म ज्ञान करवाना था ।

गुरु नानक प्रथम सत कवि थे जिन्होंने साधु होते हुए भी गृहस्थ जीवन की न केवल निन्दा ही नही की वरन् गृहस्थ को सन्यासी से उच्च माना । उनका आदर्श गृहस्थी जल मे कमल अथवा जल पर तैरती हुई बतक के समान ससार मे रहते हुए भी उससे अलिप्त था । गुरु नानक ने लोक-कल्याण के लिए लगभग ५०,००० मील की पैदल यात्रा की । मानवता का हित उनका धर्म था और सत्य का आचरण एक मात्र निष्ठा ।

मैं उन लेखको के प्रति अपना हार्दिक आभार प्रगट करती हूँ जिनकी रचनाओ का उपयोग इस ग्रन्थ मे मात्र इस उद्देश्य से किया गया है कि गुरु नानक देव जैसे धर्म-निरपेक्ष एव समाजवादी मानवता के मसीहा के व्यक्तित्व एव कृतित्व पर सम्यक् प्रकाश पड सके ।

मेरी यह दृढ मान्यता है कि यदि गुरु नानक देव के दिव्य सन्देश को हृदयगम कर उसका सही उपयोग किया जाय तो वह आज की पीडित, त्रस्त, विभक्त एव पारस्परिक अविश्वास से सत्रस्त मानवता के लिए सजीवनी का कार्य करेगा ।

—सीता हाँडा

गुरु नानक
व्यक्तित्व और विचार

[चार खण्डों में]

प्रथम खण्ड : प्रशस्तियां

द्वितीय खण्ड : जीवनवृत

तृतीय खण्ड : लेखकों की दृष्टि में गुरु नानक

चतुर्थ खण्ड : गुरु नानक की वाणी

प्रथम खण्ड

प्रशस्तियाँ

१ राष्ट्रपति वी. वी. गिरि

२. प्रधान मंत्री इन्दिरा गांधी

३: औद्योगिक विकास मंत्री,
फखरुद्दीन अलीअहमद

४. मुख्यमंत्री मोहनलाल सुखाड़िया

५. राज्य मंत्री, शिक्षा, भक्तदर्शन

६ शिक्षा मंत्री, शिवचरण माथुर

७. भूतपूर्व राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन्

८. भूतपूर्व राष्ट्रपति डा० जाकिर हुसैन

श्री वी. वी. गिरि
राष्ट्रपति

गुरु नानक देव उन महान सतो और द्रष्टाओ मे से है जिन्होने हमारी राष्ट्रीय चेतना को नया प्रकाश दिया। उनके लिए वास्तविक धर्म का मूल तत्त्व ईश्वर मे अटूट श्रद्धा और मानव-सेवामय जीवन था। वे सही अर्थों में दिव्य पुरुष थे और सत्यवादी जीवन-यापन तथा विश्वबधुत्व मे विश्वास करते थे।

देश को भारत के इस महान सपूत द्वारा अपने आचरण और उपदेशो से बताये हुए प्रेम और सहिष्णुता के सदेश की भूतकाल की अपेक्षा आज और भी अधिक आवश्यकता है। ईश्वर से यही प्रार्थना है कि हम अपने विचारो और कार्यों से अपने आपको भारत के योग्य साबित करें।
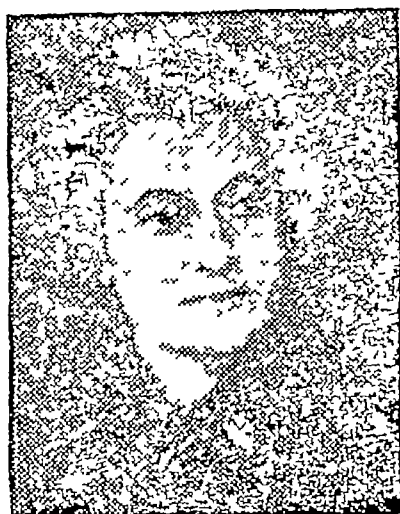
श्रीमती इन्दिरा गांधी
प्रधान मंत्री

गुरु नानक देव ऐसे युग मे पैदा हुए थे जो नव जागृति का युग था। उन्होने देखा कि जनता धर्म का गलत अनुसरण कर रही है तथा धर्म रूढ़ियों मे बंध गया है। उन्होने यह अनुभव करते ही धर्म को रूढियो से निकालकर सही दिशा दी।

मानव को सदा ही गुरु नानक देव जैसे सन्तो की शिक्षाओ की आवश्यकता रहती है, गुरु नानक देव की शिक्षा प्रत्येक व्यक्ति के दैनिक जीवन से सम्बन्धित है।

श्री फखरूद्दीन अलीअहमद
औद्योगिक विकास मंत्री,
भारत सरकार

प्राचीनकाल की अपेक्षा आज हमे गुरु नानक की बहुत अधिक आवश्यकता है। वस्तुत' कवि और निसंग आत्मा होते हुए भी उन्होंने कभी भी जीवन के मूल स्रोत से अपने को अलग नही किया। उन्होने समाज को एक नया मार्ग दिखलाया। गुरु नानक मानव की मूलभूत अच्छाई में विश्वास करते थे और उसके सर्वोत्तम मानवीय गुण को प्रोत्साहित करने मे समर्थ थे। उन्होने भारत को एक नयी वसीयत दी और तत्कालीन समाज में अभूतपूर्व परिवर्तन किए। हमे उनकी सेवा और विनय की भावना का अनुकरण करना चाहिए।

श्री मोहनलाल सुखाडिया
मुख्य मंत्री, राजस्थान
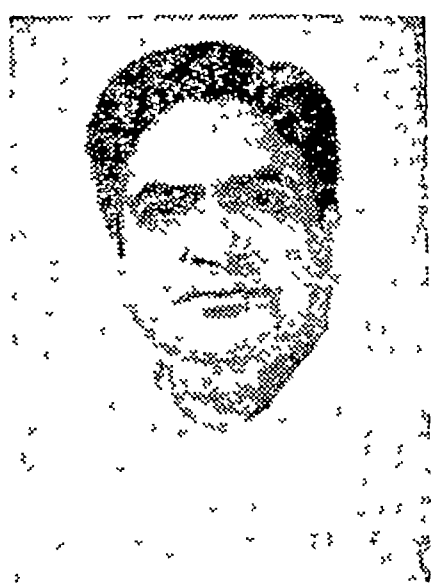
गुरु नानक देव केवल सिखो के ही नही थे, जो कि उन्हे अपना गुरु मानते हैं, अपितु समूची मानव जाति के थे। वे ससार के गुरु, समाज सुधारक तथा एक राष्ट्रीय विभूति थे और सभी ने उन्हे आदर दिया था। उन्होने बिना किसी धर्म की आलोचना किए धर्म का एक सार्वजनिक सदेश दिया था। उन्होने सिखाया था कि परमात्मा केवल एक है तथा सभी नर-नारी उसकी सन्तान हैं। वह भगवान के प्रति अटूट श्रद्धा रखते थे तथा उसे ही सर्वोपरि सत्ता और मनुष्यो को भाई-भाई मानते थे। उन्होने मनुष्य और मनुष्य के बीच के भेद तथा जाति, वर्ग और रगभेद को सदैव अनुचित बताया। समाज मे उन्होंने शाति के आदर्शों तथा भाईचारे की विचारधारा फैलाने तथा सामाजिक बुराइयो और अन्धविश्वासो को समाप्त करने का कार्य किया। वह दलितो के उद्धारक थे।

आज के आपाधापी और तनावपूर्ण वातावरण से ग्रस्त ससार मे गुरु के उपदेश के अधिकाधिक प्रचार की महती आवश्यकता है। यह उपयुक्त अवसर है जबकि सार्वभौमिक भाईचारे और प्रेम, शाति और एकता तथा सबके प्रति सद्भाव के सदेश को समूची मानव जाति तक पहुँचाया जाय।

श्री भक्त दर्शन
राज्य मंत्री, शिक्षा
भारत सरकार

गुरु नानक देव जी महामानव थे और उन्होने अपने आचरण, शिक्षाओ और उपदेशो से अपने देशवासियो को उत्तरदायी नागरिको के रूप मे व्यवहार करने का और अन्ततः आध्यात्मिक लक्ष्य प्राप्त करने का दिशा-निर्देशन दिया। हमारे देश व सस्कृति के सभी अभिजात अंशो को उन्होंने अपने व्यक्तित्व मे समेट लिया था।

श्री शिवचरण माथुर
शिक्षा मंत्री,
राजस्थान

गुरु नानक महान विचारक थे । जाति, धर्म, भाषा, प्रदेश, ऊँच-नीच आदि क्षुद्र विभेदो मे फँसे तत्कालीन समाज को उन्होने नई तथा स्वस्थ दिशा दी और समाज मे नारी का उच्च स्थान बनाया । वे मानव की सेवा को ही सच्ची ईश्वरोपासना मानते थे । आज जब कि लोग छोटी छोटी बातों पर लडते झगडते हैं और देश की एकता मे दरारें नजर आ रही हैं, गुरु नानक के उपदेशो के प्रचार व प्रसार की महती आवश्यकता है ।

डा० राधाकृष्णन्
भूतपूर्व राष्ट्रपति
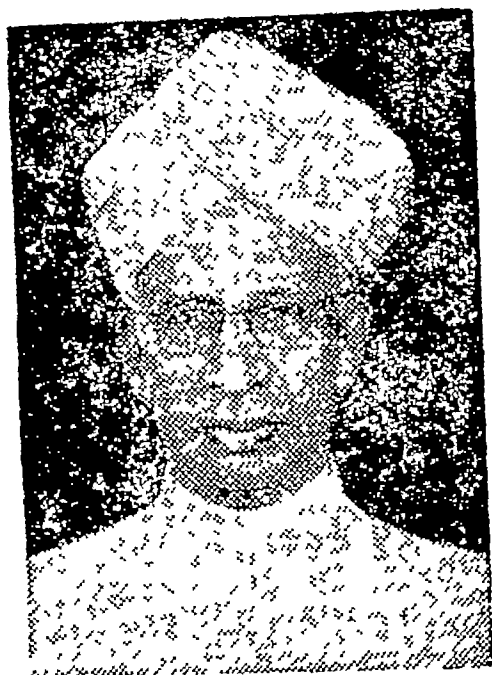
गुरु नानक मानवता के पथ-प्रदर्शक थे। पराजय की भावना से ग्रसित मनुष्य के हृदय मे धर्म और मानवता की आत्मा को पुन. जागृत करने के लिए इनका जन्म हुआ। उनके अनुसार मुक्ति का अर्थ समय और काल मे परिबद्ध ससार से पलायन करना न होकर किसी भी परिवेश अथवा स्थिति मे ज्ञान प्राप्त करना था।

गुरु नानक ने आत्मगौरव की भावना से युक्त, भगवान और मार्गदर्शको पर आस्था रखने वाले, समानता और भ्रातृत्व की भावना से परिपूर्ण स्त्री तथा पुरुषो से सम्पृक्त जाति का निर्माण करने की चेष्टा की।

डा० जाकिर हुसैन
भूतपूर्व राष्ट्रपति
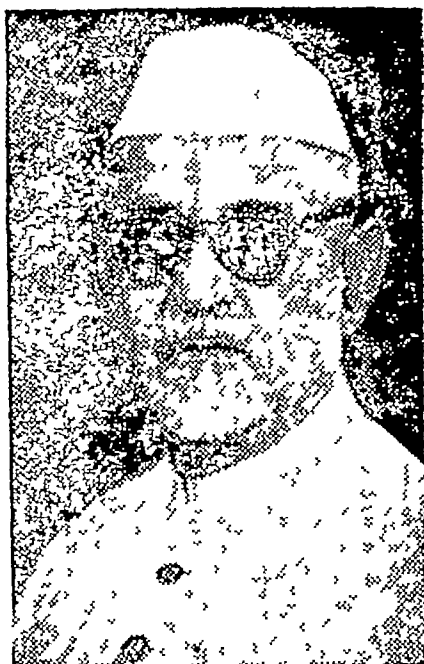
पचम जन्म-शताब्दी सिख धर्म के उस प्रवर्तक के प्रति उपयुक्त श्रद्धाजलि है जो शान्ति, एकता, प्रेम श्रौर मानव भ्रातृभाव के प्रतीक थे श्रौर जो श्रपनी मानवतावादी दृष्टि के कारण, सभी धर्मावलम्बियो द्वारा प्रशसित श्रौर सम्मानित थे ।

बाबा नानक शाह फकीर ।
हिन्दू का गुरु,
मुसलमान का पीर ।।

गुरु नानक के जन्म स्थान ननकाना साहब मे 'गुरद्वारा जन्म स्थान'

गुरु नानक अपने अध्यापक गोपाल पंडित से विवाद करते हुए

अपनी बड़ी बहन नानकी की गोद में गुरु नानक

प्रसिद्ध
'जनमसार
के
अनुसार
'विद्याल
मे
गुरु ना

गोरखनाथ टीले पर योगियो से विवाद करते हुए गुरु नानक देव
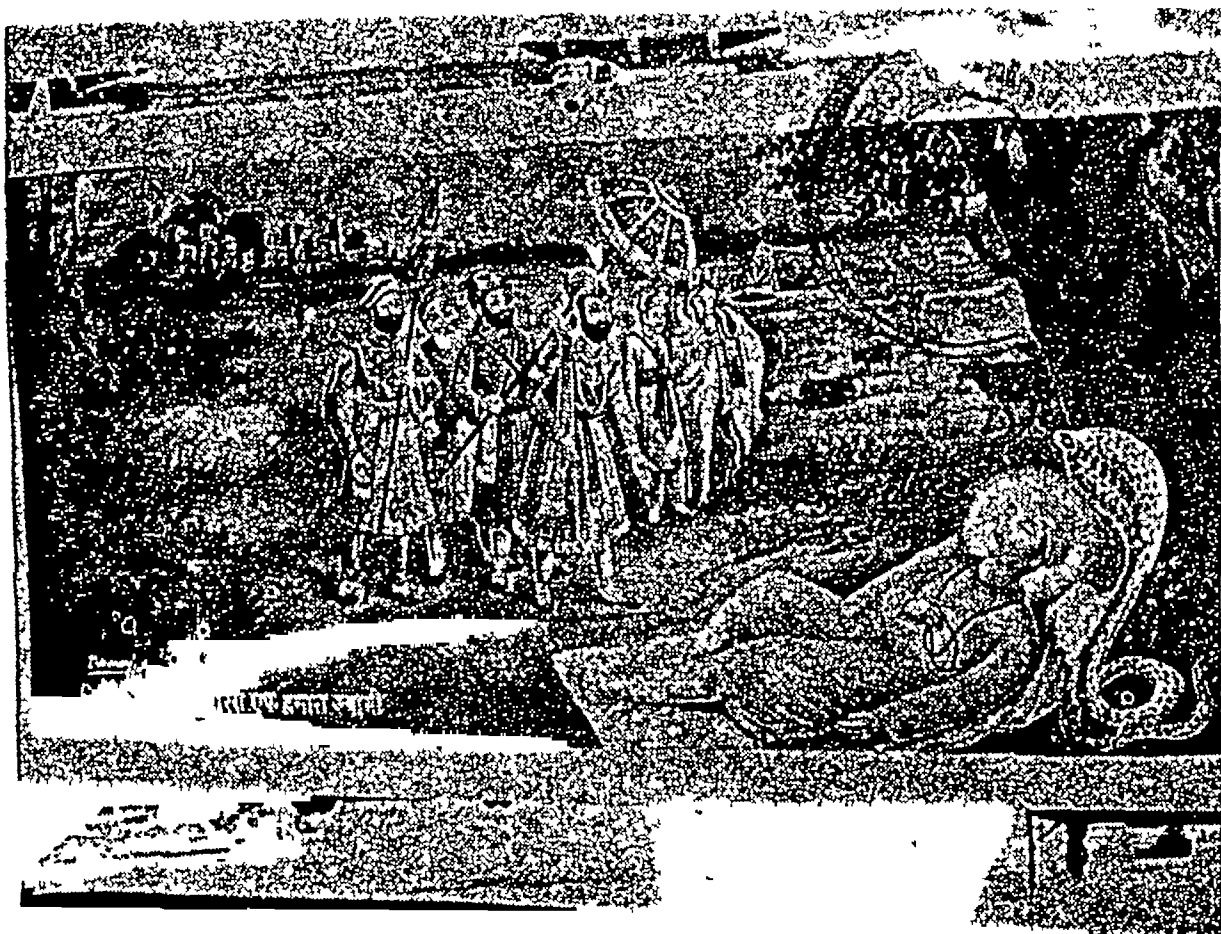
राय बुलार गुरु नानक के सिर पर नाग को छाया करते देख रहे

मक्का में गुरु नानक जब वे काबे की ओर पैर करके सो गए थे
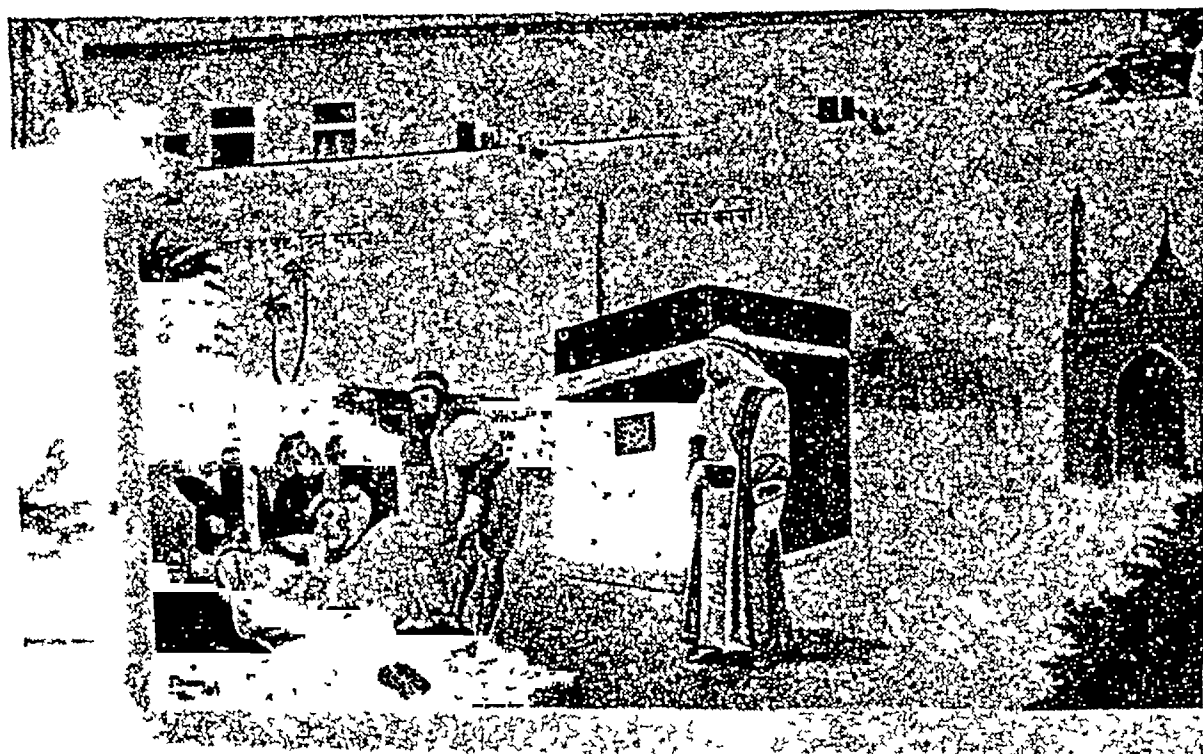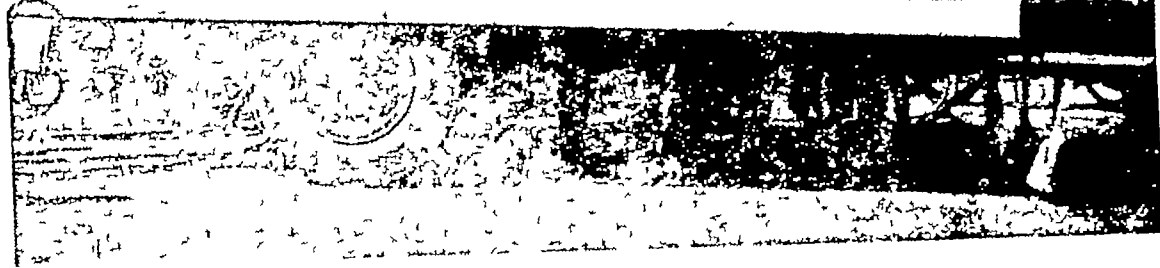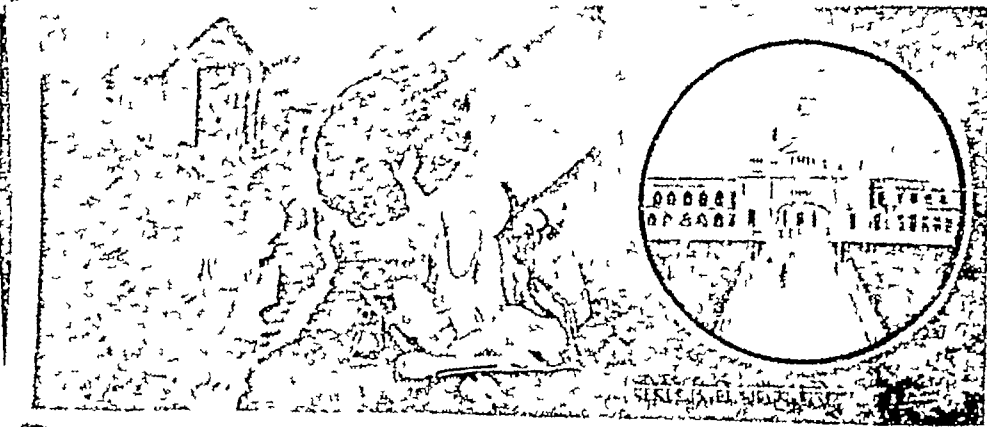
गुरु नानक हसन अब्दाल (पजा साहब) मे वली कधारी द्वारा
फेकी चट्टान को हाथ से रोकते हुए

●

गुरु नानक बाबर को समझा रहे है कि उन्हे 'सतनाम' का नशा है

गुरु नानक भाई बुड्ढा को आशीर्वाद देते हुए

गुरु नानक—व्यक्तित्व और विचार

समकालीन परिस्थितियाँ

गुरु नानक देव जी का जन्म सन् १४६६ और देहावसान सन् १५३६ में हुआ। यह समय भारत में ही नही वरन् सारे विश्व में संक्राति का युग था। इस काल को पुनर्जागरण, खोजों, धार्मिक सुधारों एवं साहसिक कार्यों के युग के नाम से अभिहित किया जा सकता है। इंगलैण्ड में यदि ट्यूडर शासन के साथ ही आधुनिक युग का सूत्रपात हुआ तो जर्मनी मे मार्टिन लूथर ने प्रोटेस्टेन्ट विचारधारा को प्रोत्साहन देकर धार्मिक सुधारो का बीड़ा उठाया। सन् १४६८ में वास्कोडिगामा ने जल-यात्रा द्वारा नवीन प्रदेशों की खोज का सूत्रपात किया। इस प्रकार मानव-मन में नवीनता की खोज के प्रति आग्रह था, मानस-तल विक्षुब्ध था और वह कुछ अधिक श्रेष्ठ और नवीन को प्राप्त करने के लिए उत्कंठित था।

भारत में भी इस समय चारों ओर असंतोष व्याप्त था। मानव अपनी राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक एवं आर्थिक परिस्थितियों की शृंखलाओ से आबद्ध था और उनसे मुक्त होने के लिए छटपटा रहा था। यदि कभी वह असहाय होने के कारण संन्यासी की सी उदासीनता और भाग्यवादिता से अपने मन को सान्त्वना देने की चेष्टा करता था तो कभी सगुण भगवान की कल्पना कर, उसी के गुणकीर्तन के भुलावे मे अपने मन को फसाकर प्रसन्नता प्राप्त करना चाहता था। परन्तु सभी परिस्थितिया ऐसी जटिल हो चुकी थी कि नासूर की पीड़ा की तरह रह रहकर असन्तोष और दुःख की एक लहर उसके तन-मन को साल जाती थी। वह विक्षुब्ध होकर विद्रोही हो उठता था अपनी परिस्थितियों के प्रति।

नानक के जन्म (सन् 1469) के समय उत्तर भारत में लोदी वश का राज्य था, जो सन् 1451 से 1526 तक रहा। इनके समय में

ही भारत पर बाबर के आक्रमण हुए और मुगल साम्राज्य की नीव पड़ी। इनसे पहले दसवी शताब्दी के आरम्भ से ही भारत विदेशी आक्रमणकारियो से आक्रात होने लगा था। मुसलमानो, अफगानो और तुर्कों ने अपने राज्यो की स्थापना की और तलवार के बल पर राज्य किया। उन्होने शासक होने के नाते हिन्दुओ पर अनेकानेक अत्याचार किए। किसी भी हिन्दू का हिन्दुत्व उसे अकारण ही बडी से बड़ी सजा दिलवा सकता था। उसे नाना प्रकार के अपमान सहने पड़ते थे। इससे स्त्री और बच्चे तक असुरिक्षत थे। मुसलमान न होने के कारण उन्हे जजिया नामक कर देना पडता था। हिन्दू किसी भी बडे सरकारी पद के अयोग्य समझा जाता था। उसी समय के शासक का रूप गुरु नानक की निम्नलिखित पंक्तियो से स्पष्ट हो जाता है—

राजे सीह मुकद्दम कुत्ते।
जाए जगाइन बैठे सुत्ते।
चाकर नहदा पाइन्ह घाउ।
रत पित कुतिहो चट जाहु।

यहाँ गुरु नानक ने शासक की तुलना हिंसक सिंह से की है तथा अन्य पदाधिकारियो तथा सेवको को कुत्ते के समान माना है। वे कहते हैं कि शासक सिंह के समान हिंसा-प्रिय है और उसके पदाधिकारी उन कुत्तो के समान है जो बैठे और सोते हुए लोगो को अकारण ही जगा देते हैं, अर्थात् जो शान्तिप्रिय प्रजा को बिना किसी कारण के परेशान करते रहते है। राज्य के अन्य कर्मचारी उन कुत्तो के समान हैं जो अपने नाखूनो से घाव करके फिर खून पी जाते है।

विभिन्न आक्रमणकारियों ने साधारण जनता का सर्वनाश कर उन्हे किस प्रकार पैरो तले रौदा, उसका अत्यन्त मार्मिक चित्रण गुरु नानक ने इस प्रकार किया है—

जिन सिरि सोहनि पटीयाँ मागी पाए सन्धूर।
से सिर काती मुनीअन्ह गल विच आवै धूडि।

महला अंदरि होदीआं हुण बहण न मिलह हदूर ।।
जदहु सीआ बीआहिआ लाडे सोहन पास ।
हीडोली चद आईआ दद खंड कीने रास ।
उपरहु पाणी वारीए झल्ले झमकन पास ।
इक लख लहन्ह बहिढिया लख लहन्ह खडीआ ।
गरी छुहारे खादीआ माणन से जडीआ ।
तिन्ह गल सिलका पाईया तुटन्ह मोतसरीआ ।
धन जोबन दुए वैरी होय जिन्ही रखे रंग लाए ।
दूता नो फुरमाएया लै चले पत गवाइ ।।

गुरु नानक ने आक्रामको द्वारा सद्गृहस्थियों पर होने वाले अत्याचार का वर्णन किया है । राजसी ऐश्वर्य में रहने वाली सौन्दर्य-सुख सम्पन्न स्त्रियो की मुसलमानों के राज्य में हुई दुर्दशा का वर्णन करते हुए गुरु नानक ने कहा है—कि जिन स्त्रियों के शीश सिन्दूर और सुन्दर पट्टियों से सुशोभित रहते थे उनके बाल काट कर उनके साथ इस प्रकार दुर्व्यवहार किया कि वे अब गले तक धूल से भर गयी हैं । जिन्हे सदैव महलों के अन्दर रहने की आदत थी उनके लिए अब बाहर बैठने के लिए भी स्थान का अभाव हो गया है, जो स्त्रिया पहले ऐश्वर्य के समस्त साधनो से युक्त थी, अपने पतियों के साथ रमण करती थी, जिनके ऊपर से जल न्यौछावर किया जाता था (ताकि कुदृष्टि न लग जाए), जिनके आसपास चमकते, झलमलाते पंखे डोला करते थे, जो लाखो रुपयों मे रहती थीं (अर्थात अत्यन्त सम्पन्न थी), जिन्हे सदैव गरी और छुहारा आदि मेवे खाने की आदत थी, जो सुन्दर सेजो पर सोती थी, जिनके परिधान रेशमी होते थे और जो यौवन और सौन्दर्य के रंग मे रंगी हुई थी, उनके लिए उनका अनुपम सौन्दर्य और यौवन ही दुश्मन हो गया । अर्थात् इसी सौन्दर्य और यौवन के कारण वे अपहृत होकर दुर्दशा को प्राप्त हुईं । दूतों को फरमान मिला, वे उन्हे ले चले और उनकी मर्यादा नष्ट हो गयी ।

गुरु नानक ने थोड़े से उपमानों और शब्दों द्वारा राजनैतिक परिवेश का शब्द-चित्र प्रस्तुत कर दिया है । अत्याचार और अना-

चार उस समय किस पराकाष्ठा को पहुँच गए होगे, शासक किस प्रकार शासित के कष्टो के प्रति उदासीन हो चुके होगे, उनके दरबारों मे प्रार्थना पत्र देना कितना सारहीन हो चुका होगा, स्थिति कितनी करुण एव दुखपूर्ण हो चुकी होगी कि गुरु नानक जैसे महान् साधक और सत को सबसे बड़े दरबार के स्वामी स्वय ईश्वर को प्रार्थना पत्र के स्थान पर ताडना देनी पडी । बाबर के आक्रमण से दुखी जनता को देखकर उनके हृदय से अनायास ही निकली उलाहना और ताडना से युक्त पक्तियो को देखिए.—

"खुरासान खसमाना कीया हिन्दुस्तान डराएआ
आपै दोस न देई करता जम करि मुगल चढ़ाएआ ।
ऐती मार पई कुरलाणीं तैं की दरद न भाएया ।
करता तू समना का सोई ।
जे सकता सकते को मारे ता मन रोस न होई ।"
सकता सहि मारै पै वगै खसमै सा पुरसाई ।।"

अर्थात् खुरासान की तूने रक्षा की और हिन्दुस्तान को भयभीत कर दिया । तुम्हे दोष न हो इसलिए यम रूपी मुगलों का आक्रमण करा दिया । हमे इतनी मार पडी, इतनी पीड़ा पहुँचाई गयी, फिर भी तुम्हे हम पर दया नही आई । हमारे दु.ख से तुम दुखी नही हुए । हे भगवान, तुम तो सभी प्राणियो के समान रूप से समान रक्षक हो । यदि एक शक्तिशाली दूसरे शक्तिशाली को मारे तब तो ठीक है, लेकिन यदि अति पराक्रमी सिंह निरीह पशुओ पर आक्रमण कर दे तो उनका मालिक क्या पुरुषार्थ नही दिखाएगा ?

गुरु नानक ने शासको तथा राजाओ की तुलना बूचड़ो से की है । उन्होने कहा है कल काती राजे कासाई ।

सामाजिक परिस्थितियां

इस राजनैतिक अत्याचार और अनाचार के युग में समाज भी विक्षुब्ध हो चुका था । हिन्दू और मुसलमानो का भेद स्पष्ट हो चुका था । एक ओर शाषित वर्ग था और दूसरी ओर शासक वर्ग । समाज मे अधिकार या ऊँच-नीच व्यक्तिगत गुणो के कारण नहीं,

वरन् जाति से आंके जाते थे। जन साधारण में भय समाया हुआ था। हिन्दू अपने दैनिक यज्ञ तो क्या अपना पहनावा भी इच्छानुसार नही चुन सकते थे। जातिवाद का बोलबाला था। हिन्दू और मुसलमान एक दूसरे को घृणा की दृष्टि से देखते थे। नारी को केवल मात्र भोग की वस्तु माना जाता था। उसका समाज मे कोई विशिष्ट स्थान नही था। नारी को निकृष्ट माना जाता था और वह अर्चना-पूजा द्वारा मोक्ष अथवा स्वर्ग की अधिकारिणी नही हो सकती थी। स्त्री को भवजाल मे बाधने वाली और पुरुष के आध्यात्मिक जीवन मे बाधा पहुँचाने वाली समझा जाता था। अत. आध्यात्मिक प्रगति के इच्छुक उसकी छाया से भी दूर भागते थे। उसे अछूत मानते थे।

अछूतो और शूद्रो अथवा निम्न वर्ग के लोगो की भी बुरी दशा थी। जो व्यवहार हिन्दू जाति के सवर्णो को मुसलमानो द्वारा तलवार की नोक पर मिलता था, वही बदले में सवर्णो द्वारा इनको मिलता था। समाज से वहिष्कृत तथा तिरस्कृत यह वर्ग घृणा और अस्पृश्यता के बोझ के नीचे दबकर जीवित होते हुए भी मृत के समान था। छुआछूत, ऊँच-नीच तथा जातिवाद की भावना ने समाज को दुर्बल बना दिया था। यदि मुसलमान हिन्दुओ को काफिर कहते थे तो हिन्दू भी मुसलमानो को म्लेच्छ कहकर उन्हे अस्पृश्य मानते थे।

आर्थिक परिस्थिति

समाज मे फैली इस अशान्ति का बहुत कुछ कारण आर्थिक भी था। शासक आक्रामक होने के कारण जनसाधारण से प्रेम भाव नही रखते थे। उनका एक मात्र उद्देश्य जिस-तिस प्रकार से भी अपने भंडारों को भरना था; अत. घूसखोरी का प्राधान्य था। देश में निम्न जाति के लोग थे जो अत्यन्त गरीब थे। उनसे शासक वर्ग के कर्मचारी समय समय पर बेगार लेते रहते थे। कोई भी हिन्दू धनिक सुरक्षित नही था। अतः जनसाधारण की आर्थिक दशा बहुत खराब हो चुकी थी। जन साधारण का मन इससे दु.खी था, निराश था, पर वे किसी के आगे फरियाद भी नही कर सकते थे।

धार्मिक परिस्थितियाँ

आर्थिक परिवेश के साथ-साथ धर्म के क्षेत्र में भी बहुत उथल-पुथल मची हुई थी। विभिन्न धर्माचार्य अपने-अपने ढंग से अपने धर्म का प्रचार और प्रसार कर रहे थे। हिन्दू धर्म के प्रचारक द्वैतवाद, अद्वैतवाद, विशिष्टाद्वैतवाद आदि अनेक वादो के चक्कर मे पड़े हुए थे। लगभग इसी समय भारत के विभिन्न भागो मे अपनी-अपनी विचारधाराओ को प्रतिपादित करने वाले सगुण और निर्गुण भक्ति के उपासक सत और धर्माचार्य हुए। इनमे से विशेष रूप से उल्लेखनीय महाराष्ट्र के ज्ञानदेव, नामदेव और एकनाथ के अनुयायी, गुजरात के नरसिंह मेहता, बगाल के चैतन्य महाप्रभु, गगा के मैदानों से कबीर और तुलसीदास, आन्ध्र से वल्लभाचार्य तथा राजस्थान से मीराबाई हैं। इसी समय पजाब मे गुरु नानक देव जी का जन्म हुआ।

धार्मिक क्षेत्र मे भी चारो ओर हाहाकार मचा हुआ था। मन्दिरो को तोडकर मस्जिदो का निर्माण हो रहा था। भगवान को मूर्तियो के टुकड़ो से बूचडखानो मे मास तौला जाता था। पुराणों का स्थान कुरान लेती जा रही थी। हिन्दुओ को धार्मिक कृत्यों तथा रिवाजो का निर्वाह करने को स्वतन्त्रता नही थी तथा उसके लिए उन्हे मृत्युदण्ड तक से दण्डित किया जा सकता था।

हिन्दू धर्मानुयायी अहिंसा मे विश्वास करते थे। वे स्वर्ग के स्वप्नो मे खोए मृत्युलोक की पीडाओ से उदासीन हो चले थे। हिन्दू धर्म कर्मकाण्डो, अन्धविश्वासो, बाह्याचारो की शृखलाओ मे जकडा हुआ था। धर्म केवल खाने, पीने, नहाने, माथे पर चन्दन का लेप करने, विवाह और मृत्यु के विशेष रूप के सस्कारो तक ही सीमित हो चला था। धर्माधिकारी ब्राह्मण मत्र तत्र मे विश्वास करते थे। उनका ध्यान मत्र विशेष के अर्थ की ओर नही जाता था, वरन् उसे याद रखने और उच्चारण करके जीविका निर्वाह ही उनका एक मात्र उद्देश्य रह गया था। इस प्रकार पुजारी और जनता दोनो मत्रो एव सस्कारो के मूलभाव को भूलकर केवल उनके

बाह्याचारो में ही उलझ कर रह गए थे, वे धर्म का मूल ही भूल गए थे। धर्म केवल रूढि मात्र ही रह गया था।

मुसलमान भी असहिष्णु और कट्टरपथी थे। धर्म के नाम पर अत्याचार करना साधारण बात थी। यहा तक कि अलाउद्दीन हिन्दुओ को छै महीने से अधिक अन्न और वस्त्र सग्रह करने की आज्ञा नही देता था। मुल्ला भी मुसलमानों को कुरान की वास्तविकता से दूर रख उन्हे मूर्ख बना रहे थे। वे ब्राह्मणो से किसी प्रकार भी अधिक धार्मिक नही थे। उनका धर्म भी बाह्य आडम्बरो तक ही सीमित रह गया था।

साराश यह है कि हिन्दू और मुसलमान दोनो परस्पर वैमनस्य में फंसकर एक दूसरे को नीचा दिखाने पर तुले हुए थे। मुस्लिम वर्ग शासक होने के नाते शासितो पर मनमाना अत्याचार और अनाचार कर रहा था। हिन्दुओ मे, धर्म में विभिन्न मतमतान्तरो का प्रचलन होने के कारण, परस्पर विद्वेष था। एक मतावलम्बी दूसरे को नीचा दिखाने में गौरव का अनुभव करता था। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे अराजकता का पूर्ण साम्राज्य था। जन-मानस विक्षुब्ध था, व्याकुल था पर साथ ही अपनी परिस्थितियों से छुटकारा पाने मे पूर्ण रूप से असमर्थ तथा असहाय भी था।

गुरु नानक का जीवन वृत्त

भारत की समसामयिक परिस्थितियो में नानक का जन्म गीता के इस श्लोक—

> "यदा यदा ही धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
> अभ्युत्थानायधर्मस्य तदात्मान सृजाम्यहम्॥"[1]

को चरितार्थ करता-सा प्रतीत होता है। भाई गुरदास के शब्दों में—

> "सतगुरु नानक प्रगटिया,
> मिटी धुध जग चानन होआ।

---

1. जब जब धर्म का ह्रास होता है और पाप बढता है तब तब मै अपना रूप आप ही प्रकट करता हू।

जिउ कर सूरज निकलिआ,
तारे छिपे अंधेर पलोआ ।।"[1]

गुरु नानक ने प्रकट होकर संसार के अज्ञान रूपी अन्धकार को दूर कर, ज्ञान का प्रकाश फैलाया। इनका जन्म जिला शेखूपुरा के एक गाव राय भोय की तलवडी नामक (जो आजकल ननकाना साहब के नाम से प्रसिद्ध है) स्थान पर हुआ। यह स्थान लाहौर से लगभग चालीस मील दूर है। इनके पिता महता कालू बेदी परिवार के थे। वे गाव के पटवारी थे। इनकी माता का नाम तृप्ता देवी और बहन का नाम नानकी था।

इनके बचपन के विषय में अनेक बातें प्रचलित हैं। कहते हैं कि जन्म लेते ही गुरु नानक हँसे थे और इस बात की सूचना दौलता बाई ने ज्योतिषी और कुल पुरोहित हरदयाल को दी थी। उसने जन्म समय से कुण्डली तैयार कर भविष्यवाणी की कि यह शुभ घडी में उत्पन्न होने के कारण अत्यन्त प्रतापी और चक्रवर्ती होगा।

कहा जाता है कि बचपन से ही गुरु नानक अन्य साधारण बालको से भिन्न प्रकृति के थे। वे बच्चो की तरह रोने-मचलने से अपरिचित थे। बचपन से ही अपने खेल के साथियो के साथ प्रेम और दयापूर्ण व्यवहार करना और उन्हें अपने खाने और खेलने की वस्तुएं दे डालना उनके लिए साधारण बात थी। उनका मन साधारण खेलकूद मे नही लगता था और वे अपने में ही निमग्न-से रहते थे।

सात वर्ष की अवस्था मे गुरु नानक को पण्डित के पास पढने के लिए भेजा गया। उसके बाद उन्हें संस्कृत और फारसी का ज्ञान प्राप्त करने के लिए एक पडित और मौलवी के पास भेजा। गुरु नानक इस प्रकार के पुस्तक-ज्ञान के प्रति उदासीन थे। उनका मन तो सदैव अक्षरो के गूढार्थ ढूंढने मे ही रमा रहता था। स्वय तो उन्हें

---

1. जिस प्रकार सूर्योदय होने पर तारे छिप जाते हैं और अन्धकार छुप जाता है, उसी प्रकार सतगुरु नानक के जन्म से अज्ञान का अन्धकार दूर हो गया और ससार ज्ञान के प्रकाश से प्रकाशित हो उठा।

कौन पढाता, उन्होंने ही पंडित और मौलवी दोनों को अपने ईश्वर सम्बन्धी ज्ञान द्वारा आश्चर्य चकित कर दिया।

नवे वर्ष में गुरु नानक के जनेऊ संस्कार के अवसर पर जब पुरोहित यज्ञ के विधि विधान के अनन्तर उन्हें जनेऊ पहनाने लगे तो उन्होंने पुरोहित से प्रश्न किया कि यह जनेऊ किससे निर्मित है और क्यो धारण करनी चाहिए? पुरोहित के यह कहने पर—कि यह पवित्र कपास के सूत से निर्मित है तथा मत्रों द्वारा अभिमत्रित है, इसे उच्च कुल के व्यक्ति पहनते हैं और यदि यह मैली अथवा नष्ट हो जाए तो दोबारा नया पहना जा सकता है—गुरु नानक ने उस जनेऊ को धारण करने से मना कर दिया। उन्होने कहा—"हे पडित! मैं तो केवल वही जनेऊ धारण कर सकता हूँ जिसके बनने में दया रूपी कपास, सतोष रूपी सूत, अच्छे जीवन का निर्माण करने वाली सत्य की गाठ लगी हो। इस प्रकार का जनेऊ ना तो नष्ट होता है और ना ही उसमे कलुष लगता है। इस प्रकार के जनेऊ को गले में धारण करने वाला मनुष्य धन्य है।" [1]

अब गुरु नानक के पिता ने यह सोचकर कि बालक पढने तथा अन्य कार्यों के प्रति उदासीन है, उसे भैसे चराने का काम सौंपा। गुरु नानक भैसे चराने के लिए ले तो गए पर स्वयं तो भगवद्भक्ति मे लीन हो गए और उधर भैसे किसी किसान का खेत चर गईं। कहते हैं कि शिकायत होने पर जब पूछताछ की गयी तो खेतो को यथावत् पाया गया। यदि हम इस चमत्कार को न भी माने तो यह तो कहना ही पडेगा कि गुरु नानक का व्यक्तित्व और नि:स्पृह भाव शिकायत करने वाले के मन मे भी सद्भावना उत्पन्न कर देता था और वह अपना वैर-भाव भूल जाता था।

गुरु नानक के पिता ने उन्हे विभिन्न कार्यों मे लगाने की चेष्टा की, किन्तु उनका मन कही भी नही लगा। अपने भगवान के ध्यान

---

1. दइआ कपाह सतोखु सूतु जतु गठी सतु वटु।
   एह जनेऊ जीअ का हई त पाडे घतु।
   ना ऐहु तुट न मलु लगै ना ऐहु जलै न जाइ।
   धन सु माणस नानका जो गलि चले पाइ।

मे वे ऐसे खोए रहते थे कि भूख-प्यास तक भूल जाते थे। उनके अनमनेपन को देखकर उनके पिता ने सोचा कि बालक बीमार है, अत. उनके रोग के निदान के लिए वैद्य को बुलवाया। वैद्य को नाड़ी परीक्षा द्वारा रोग निदान का प्रयत्न करते हुए देख कर वे, उसे कहते हैं—

"वैदा वैद सो वैद तू पहला रोग पछान।
ऐसा दारू लाढ लहो जिन बन्जै रोगा घाण।
जिन दारू रोग उठीऐ तन सुख वसैं आयें।
रोग गवाए आपना ता नानक वैद सदायें।।
वैद बुलाया वैदगी पकड ढढोले बाह।
भोला वैद न जानइ कर्क कलेजे माहि।।

अर्थात् हे वैद्य, पहले तू रोग का निदान कर। यदि तू सच्चा वैद्य है तो ऐसा इलाज ढढ जो सदैव के लिए सारे रोगो को दूर कर दु खो को दूर करे और शरीर को शाश्वत प्रसन्नता दे। गुरु नानक कहते हैं कि इलाज करने के लिए वैद्य को बुलाया और वह बाह को पकड कर टटोल रहा है। हे भगवान ! उसे नही मालूम कि पीड़ा तो हृदय मे है।

गुरु नानक के पिताने उन्हे व्यवसाय मे लगाने का विचार किया। बीस रुपए देकर उन्हे लाभप्रद वस्तुओ को खरीद कर लाने को कहा। गुरु नानक रुपए लेकर चले तो रास्ते मे भूखे साधुओ को देखकर उन्होने सब रुपए उन्ही के खान-पान मे व्यय कर दिए। उनकी दृष्टि मे यही सच्चा सौदा था।

सासारिक व्यवहार के प्रति उदासीन अपने पुत्र को ससारी बनाने के लिए इनके पिता महता कालू ने चौदह वर्ष की अवस्था में ही गुरु नानक का विवाह बटाला निवासी मूला की पुत्री सुलखनी से कर दिया। उनके श्रीचन्द और लक्ष्मीचन्द नामक दो पुत्र भी हुए परन्तु गृहस्थी का आकर्षण भी उन्हे सासारिक मोह और बधनो में नही जकड पाया।

गुरु नानक के सत्रहवे वर्ष मे उनके व्यवहार और उनकी उदासीनता से दुखी और असन्तुष्ट पिता को शान्त करने के लिए

बड़ी बहन नानकी ने उन्हे अपने पास सुलतानपुर बुला लिया। गुरु नानाक के बहनोई जयराम उप्पल सुलतानपुर के नवाब दौलत खाँ लोदी के यहाँ नौकरी करते थे। उन्होने अपने प्रयत्न से गुरु नानक को शाही मोदीखाने में भण्डाराध्यक्ष नियुक्त करवा दिया। कहा जाता है कि यहाँ भी वे सफल नही हो पाए क्योकि गिनते गिनते तेरह पर पहुँचते ही उन्हे 'तेरा' अर्थात् भगवान सुध आनन्द निमग्न कर देती थी। वे बिना गिनती के ही तौलते चले जाते थे। शाह के पास इस अनियमितता की खबर पहुँची और जाँच पड़ताल हुई। कहा जाता है कि जाँचने पर कही कोई कमी नही पायी गयी।

सुलतानपुर में ही गुरु नानक की भेट अपने प्रिय शिष्य मर्दाना से हुई। यही पर वे नित्यप्रति प्रात काल बैन नदी में स्नान के लिए जाते थे। ऐसा कहा जाता है कि एक दिन स्नान के लिए डुबकी लगाने के बाद गुरु नानक तीन दिन तक गायब रहे। कुछ लोगों का विचार है कि उन्होने जल के अन्दर समाधि लगा ली थी। यही उन्हें भगवान का साक्षात्कार हुआ। तीन दिन बाद जब वे जल से बाहर निकले तो उनके विचार में न कोई हिन्दू था और न कोई मुसलमान।

गुरु नानक की इस आश्चर्यजनक उक्ति ने सबमें खलबली मचा दी। उड़ते-उड़ते यह सूचना नवाब के पास पहुँची और उन्हें कहा गया कि गुरु नानक गलत प्रचार कर रहे हैं। नवाब साहब ने उन्हे बुलवाया। उनके यह कहने पर कि वे हिन्दू-मुसलमान मे कोई भेदभाव नही मानते, उन्हे मस्जिद मे नमाज पढ़ने के लिए कहा गया। गुरु नानक इसके लिए तैयार हो गए परन्तु जब सब लोग नमाज पढ़ रहे थे वे एक कोने मे चुप खड़े मुस्कराते रहे। इस बात की शिकायत नवाब के पास पहुँची। उनसे कहा गया कि गुरु नानक न केवल सबके साथ नमाज पढने से अलग रहे वरन् नमाज पढते समय हमारा उपहास करते रहे। गुरु नानक ने कहा कि यह बात सत्य है। मैंने नमाज मे भाग नही लिया। नमाज जमात में पढ़ी जाती है। जमात का शरीर मस्जिद मे था। मन से वे सब अपने अपने सांसारिक कार्यों में उलझे हुए थे। जब जमात ही नही थी तो मैं नमाज किसके साथ पढता। यह सुनकर काजी बहुत शर्मिन्दा हुआ और गुरु नानक की

बात की सत्यता को स्वीकार किया। यही उनके मानव बन्धुत्व और एकेश्वरवाद की घोषणा थी।

गुरु नानक की यात्राएँ

गुरु नानक का अधिकाश जीवन पैदल यात्रा करने मे ही व्यतीत हो गया। कुछ लोगो का विचार है कि उन्होने लगभग 50,000 मील की पैदल यात्रा की। भारत-भ्रमण के अलावा विदेशो की भी उन्होने यात्रा की। यहा तक कि उन्हें विश्वयात्री के नाम से भी अभिहित किया जाने लगा है।

देश-भ्रमण की दृष्टि से गुरु नानक के जीवन को पाच भागो मे विभक्त किया जा सकता है। इनकी यात्राओ को 'उदासी' सज्ञा से अभिहित किया जाता है। पहली उदासी मे उनका मुसलमान शिष्य मर्दाना साथ रहा जो गुरु-वाणी के साथ रबाब बजाकर जनसाधारण को मत्र-मुग्ध कर देता था।

इस 'उदासी' के दौरान गुरु नानक ने भारत के पूर्वी प्रदेशो की यात्रा की।

गुरु नानक एमनाबाद, कुरुक्षेत्र, हरिद्वार, पानीपत, दिल्ली, बनारस, नानकमाता (गोरखमाता) कामरूप (आसाम), जगन्नाथ पुरी आदि अनेक शहरो मे होते हुए पाक पाटन के रास्ते पजाब वापस पहुँचे।

एमनाबाद मे मलिक भागो के भोज को ठुकराकर और उसके स्थान पर लालो बढ़ई के रूखे सूखे भोजन को ग्रहण करके उन्होने मेहनत और सत्य से अर्जित कमाई के महत्त्व को प्रतिपादित किया। भागो का भोज त्याज्य था क्योकि उसको अर्जित करने मे दूसरो का खून चूसा गया था; अत उसे निचोडने पर खून और लालो की रोटियो को निचोडने पर दूध की धारा बह निकली थी।

कुरुक्षेत्र मे खाने-पीने की अपेक्षा मन और कर्म की पवित्रता पर जोर दिया। हरिद्वार मे उन्होने उगते सूर्य को जल अर्पित करते देख उन्हे इस प्रथा की सारहीनता बतलाई। उन्होने पश्चिम दिशा मे गगा का जल उलीचना शुरू किया। पूछे जाने पर उन्होने कहा

कि मैं अपने खेतो को पानी दे रहा हूँ। लोगों को हसते देख उन्होने कहा कि जब मेरा दिया हुआ जल इसी पृथ्वी पर स्थित मेरे खेतो को नही पहुंच सकता तो तुम लोगो का चढाया जल पितृ-लोक में कैसे पहुचेगा।

जगन्नाथ पुरी मे भगवान की आरती उतारने के लिए कहे जाने पर उन्होने कहा कि उस भगवान की आरती मै क्या उतारूँ? उसकी आरती तो सम्पूर्ण सृष्टि दिन-रात उतार रही है। इस प्रकार इस यात्रा मे गुरु नानक ने धर्म के बाह्याचारो की व्यर्थता बतलाकर अंधविश्वासो मे फँसी जनता का उद्धार करने की चेष्टा की। बहुत से कुमार्ग पर चलने वाले लोगो को सन्मार्ग पर चलना सिखाया। इस यात्रा मे उनके अनेक शिष्य बने जिन्हे उन्होने जनता मे धार्मिक भावना के प्रचार और प्रसार के लिए वही छोड दिया।

दूसरी 'उदासी' अथवा यात्रा मे इनके साथ सइदो और गेबो नामक दो जाट शिष्य थे। इस समय उन्होने दक्षिणी प्रदेशों को यात्रा की जिसका प्रधान उद्देश्य प्रसिद्ध तीर्थस्थलो का भ्रमण करना था। इस समय उनकी पोशाक के बारे मे कहा जाता है कि उन्होने सिर पर रस्सी को पगडी के रूप मे बाँधा हुआ था, पैरो मे लकडी की खडाऊँ थी और हाथ मे मोटा डडा। इस यात्रा में उन्होने राजस्थान के विभिन्न भागो-बीकानेर, जैसलमेर, जोधपुर, पुष्कर, अजमेर, मारवाड, देवगढ, आबू आदि स्थानो का भ्रमण किया। यहा से नागापट्टम होते हुए वे सुदूर दक्षिण मे स्थित रामेश्वरम् तक गए। वे लका भी गए। लका मे उन्होने शिवनाभ को अपना शिष्य बनाया। लौटते समय लाहौर के दो अमीर खत्री दुनीचन्द और करोडीमल उनके शिष्य बने।

तीसरी यात्रा के दौरान गुरु नानक उत्तर दिशा की ओर गए जिसे सिद्धो और योगियो का केन्द्र माना जाता था। इस यात्रा के साथी एक लुहार और दूसरा रगरेज था। गुरु नानक काश्मीर के रास्ते कैलाश पर्वत की ऊँचाइयों को पार करते हुए मानसरोवर पहुँचे। वहां से वे तिब्बत और चीनी प्रदेश नानकिआग तक गए। इस यात्रा के दौरान उनका अनेक योगियो और सिद्धो से वार्तालाप हुआ।

गुरु नानक ने पीड़ित मानवता के दुखो से उन्हें अवगत कराते हुए जीवन का सत्य और उसके प्रति कर्त्तव्य की ओर सिद्धो और योगियो का ध्यान आकर्षित किया।

चौथी उदासी का लक्ष्य पश्चिमी प्रदेश थे। इस यात्रा का साथी मर्दाना था। इस यात्रा मे नानक की वेशभूषा हाजियो जैसी थी। उन्होने नीले वस्त्र पहने थे। उनकी बगल मे एक पुस्तक और हाथ मे डंडा था। मक्का मे गुरु नानक ने भगवान की सर्वव्यापकता का प्रतिपादन किया। वहाँ वे काबा की तरफ पैर करके सो गए थे। अपने पवित्र इस्लामी स्थल की ओर पैर करके सोते देख वहाँ के निवासी बहुत क्रोधित हुए। गुरु नानक ने कहा कि जिस तरफ ईश्वर न हो, उधर मेरे पैर कर दो। कहते हैं कि जिधर गुरु नानक पैर करते थे, काबा भी उधर ही घूम जाता था।

वहाँ से गुरु नानक ने जेरुसलम, बगदाद, तुर्किस्तान, मिस्र आदि स्थानो की यात्रा की। लौटते समय रावलपिंडी के निकट हसन अब्दाल (जो आजकल 'पंजा साहब' के नाम से प्रसिद्ध है) नामक स्थान पर गए। यहा पर पर्वत की चोटी पर रहने वाले वली कधारी से भेट की और उसके अहकार को दूर किया। कहते है कि उसने गुरु नानक को मारने के लिए चोटी से एक बडी चट्टान सरका दी जिसे उन्होने अपने हाथ से रोक लिया। इस घटना के बाद वली कधारी गुरु नानक का अनुयायी हो गया। इस चट्टान पर गुरु नानक के हाथ क निशान आज भी है। गुरु द्वारा पंजा साहब अत्यन्त प्रसिद्ध है।

पाचवी और अन्तिम उदासी मे गुरु नानक का भ्रमण-स्थल पजाब रहा। इन यात्रा मे वे पाक पाटन, दियालपुर, बगापुर, सुल्तानपुर, जलालाबाद, बटाला आदि स्थानो से होते हुए एमनाबाद पहुँचे। इस समय बाबर एमनाबाद को जीतकर जनसाधारण पर मनमाना अत्याचार कर रहा था। यहा पर अन्य लोगो के साथ वे स्वय भी कैद हो गए। बाबर उनकी अद्भुत शक्ति मे अत्यन्त प्रभावित हुआ और उनके कथनानुसार उनके साथ साथ अन्य सब कैदियो को भी छोड़ दिया।

यहां से गुरु नानक पसरूर, सियालकोट और मिट्ठनकोट होते हुए रावी के किनारे अपने अनुयायियों की सहायता से बसाए हुए नगर करतारपुर मे पहुँचे। यहा उन्होने अपना शेष जीवन एक किसान की तरह बिताया। उनका अधिकाश समय कृषि और ध्यान मे बीतता था। यही उन्होने लगर की प्रथा का सूत्रपात किया। मिलकर पूजा कीर्तन और सहभोज के द्वारा उन्होने ऊँच-नीच के भेदभाव को मिटाकर सह-अस्तित्व और विश्व बन्धुत्व की भावना पर बल दिया।

सत गुरु नानक : महान् आत्मचिन्तक

गुरु नानक ने यात्राएँ केवल विभिन्न प्रदेशो के प्रति अपने कुतूहल के लिए ही नही की। पीड़ित मानवता का उद्धार उनका एकमात्र उद्देश्य था। वे गृहस्थ होते हुए भी संन्यासी थे और थे एक महान् सत और आत्मचेता।

गुरु नानक देव मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य की संत परम्परा की एक कड़ी थे। उनके समय भक्ति आन्दोलन की प्रधानत चार धाराएँ थी। पहली वल्लभाचार्य के प्रतिनिधित्व में प्रसारित कृष्ण भक्ति की धारा जिसके अनुयायी धर्म और कृष्णलीलाओ का आध्यात्मिक पक्ष भूल कर सासारिकता के रास-रंग मे बह चले थे। राधा और कृष्ण की भावना की ओट मे साहित्य मे अनेक अश्लील विलास वर्णनो को स्थान मिल गया था। आध्यात्मिक प्रेम भौतिक और पार्थिवता की देहली पर मस्तक रगड़ रहा था। कृष्ण का शृंगारिक रूप ही अधिक उज्ज्वल था।

दूसरी धारा सूफी रहस्यवादी कवियो की थी। जायसी जैसे महान् कवि इसमे हुए पर आत्मा और परमात्मा के आध्यात्मिक विलास वर्णन का ऐसा चित्र खिचा, नख-शिख का ऐसा चिन्तन हुआ कि जन-साधारण के लिए आध्यात्मिक पक्ष गौण और भौतिक पक्ष प्रधान हो गया। उनका रूपक इतना अव्यक्त था, रहस्यवाद इतना जटिल तथा आध्यात्मिक सकेत इतने सूक्ष्म, कि वे पहुँचे हुए साधक के लिए भले ही बोधगम्य हो, पर साधारण बुद्धि वाले पाठक को तो वे विलास की ओर ही अधिक अभिप्रेरित करते थे।

तीसरी धारा तुलसी दास से प्रवर्तित राम भक्ति की थी। रामचरित मानस ने राम को जन साधारण का उपास्य बना दिया। इनके लिए वे भगवान का अवतार होने के कारण पूज्य थे।

कृष्ण-भक्ति धारा और राम-भक्ति धारा दोनो सगुण भक्ति को लेकर चली थी। मानव अपनी सुरक्षा और सम्पन्नता का पूरा भार भगवान को सौंपकर निश्चिन्त था। यहा तक कि सोमनाथ के मन्दिर पर महमूद गजनवी के आक्रमण करने पर पुजारियो अथवा अन्य किसी ने सुरक्षा का कुछ प्रबन्ध नही किया। सबके देखते-देखते मूर्तियाँ नष्ट हुई, मन्दिरो का विनाश हुआ। जन साधारण दुखी था और भगवान से रुष्ट कि वे इतनी बडी विपत्ति मे भी नही आए। भगवान की असीम सत्ता और उनकी भक्त के पुकारते ही दौडे आने की आदत को भूलते देख धार्मिक आस्था डोलने लगी थी।

साकार और सगुण भगवान के प्रति उदासीन होती हुई जनता को निर्गुण धारा के सतो ने आकर्षित किया। इस समय निराकार भगवान अधिक प्रिय हो सकता था क्योकि जिसका शरीर ही नही था, उसके सशरीर उपस्थित होने की न कोई अपेक्षा करता था, न कल्पना। निर्गुण रूप के उपासक सतो ने भगवान की सर्व व्यापकता, अखडता आदि पर बल दिया। उन्होने रूढिवाद, अधविश्वास तथा बाह्याचारो की भर्त्सना की।

इस समय मुसलमानो का शासन स्थापित हो चुका था। वे एकेश्वरवाद मे विश्वास करते थे। सत गुरु नानक ने समसामयिक परिस्थितियो का गहन मनन और चिन्तन किया। उन्होने समय और परिस्थितियो की आवश्यकता के अनुसार अपनी वाणियो द्वारा पीडित मानवता का उद्धार करने का प्रयास किया।

गुरु नानक सत थे लेकिन अपने समय के सिद्धो और योगियो की तरह गृहस्थ जीवन को त्याज्य नही मानते थे। वे गृहस्थी होते हुए भी सन्यासी थे क्योकि उन्होने मन से संन्यास ले लिया था। वे ससार मे उसी तरह रहने मे विश्वास करते थे जैसे पानी मे कमल अथवा उस पर तैरने वाली बत्तख, जो पानी के सम्पर्क मे रहकर भी

उससे अलिप्त रहती है। उन्होंने योगियो की वेश भूषा को भी विशेष महत्त्व नही दिया। उन्होंने सिद्धों तथा अन्य वैरागियों की तरह ससार से दूर न भाग कर उसके कल्याण के लिए लगभग पूरे भारत की यात्रा की।

उनके बारे में प्रचलित कथा—कि जब वे बेन नदी में तीन दिन जल समाधि लेने के बाद निकले तो उनके मुँह से अनायास ही यह निकल पड़ा कि न कोई हिन्दू है ना मुसलमान—बतलाती है कि उनका धर्म गहन अनुभूति और चिन्तन का फल था, शास्त्रों का निचोड़ मात्र नही। वे जो कहते थे उसमें पूर्ण विश्वास भी रखते थे। मक्का मे काजियों द्वारा पूछे जाने पर कि तुम कौन हो, उन्होंने कहाः—

"हिन्दू कहा तो मारियँ मुसलमान भी नाहि,
पाच तत्त्व का पुत्तला नानक मेरा नाह।"

अर्थात—हिन्दू कहने पर मैं मारा जाता हूँ, मैं मुसलमान भी नही हूँ। सत्य बात तो यह है कि मै तो पाच तत्त्वों से निर्मित पुतला हूँ और मेरा नाम नानक है।

यह पूछे जाने पर कि हिन्दू मुसलमानों में कौन श्रेष्ठ है, उन्होने कहाः—

"पुच्छन गल इमान दी हिन्दू वड्डा कि मुसलमानोई।
बाबा आखे हाजियां शुभ अमला बाजो दोवैं रोई।"

अर्थात् यह पूछे जाने पर कि हिन्दू बडा अथवा मुसलमान, गुरु नानक ने कहा कि "शुभ कर्मों से विहोन दोनों व्यर्थ है।"

ईश्वर के सम्बन्ध मे अपने विचारों से उन्होंने एकेश्वरवाद का प्रतिपादन किया है। उनके लिए परम सत्य की खोज जीवन का एक मात्र लक्ष्य था और उसी से मर्यादित और सयमित जीवन सम्भव था। वे सत्य को सर्वोपरि मानते थे परन्तु सत्य आचरण को उससे भी उत्कृष्ट।

जपजी के प्रारम्भ में भगवान के स्वरूप का वर्णन करते हुए उन्होने कहा है:—

" १ ओ सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरू।
अकाल मूरति, अजूनी, सैभ, गुर प्रसादि"।

अर्थात् वह एक है, ओंकार स्वरूप है, सत्य नाम वाला है, करतार है, आदि पुरुष है, वैर और भय से रहित त्रिकालातीत अयोनि और स्वयंभू है। इसकी प्राप्ति गुरु कृपा से ही होती है।

उनके अनुसार न तो ईश्वर को स्थापित किया जा सकता है न उनका निर्माण किया जा सकता है, वह स्वयभू एव निरजन है।[1]

ईश्वर आदि काल से सत्य है, युग-युगान्तरो मे भी सत्य रहा है, अभी भी सत्य है और भविष्य मे सत्य होगा भी।[2]

गुरु नानक का ईश्वर तो उन्हे नित्य नये रूपो मे दर्शन देता था और वे उसे अत्यन्त कृपालु मानते थे।[3] उनका भगवान काल्पनिक न होकर जीनव की ठोस वास्तविकता है। वे आत्म ज्ञान को विवेक का प्रारम्भ मानते थे।

निर्गुण और निराकार होते हुए भी वे ईश्वर को प्रेमी, पिता, माता, भाई, सहयोगी और मित्र के रूप मे देखते थे जिसकी प्राप्ति का एक मात्र साधन भक्ति और प्रेम ही हो सकता था।

गुरु नानक ने ईश्वर को सर्व शक्तिमान और सर्व व्यापक माना है। उनके मत मे भगवान की इच्छा के बिना एक पत्ता भी नही हिल सकता, सारी सृष्टि उसकी आज्ञा के बन्धन से बंधी है। उसी की आज्ञा से सृष्टि का सृजन और पालन होता है।[4]

---

1. "था पिया ना जाइ, कीता ना होइ। आये आप निरंजनु सोई।"
2. "आदि सचु, जुगादि सचु। है भी सचु, नानक होसी भी सचु॥"
3. "साहब मेरा नित नवां, सदा सदा दातारु।"
4. "हुकमी समे उपजहि, हुकमी कमाहि।
हुकमी काले ठोस है हुकमी साचि समाहि।
नानक जो तिसु भावै से थीए, इना जन्ता वसि किछु नाहि।
हुकमी होवन आकार, हुकमु न कहिन्आ जाई।
हुकमी होवन जीअ, हुकमि मिलै वीड आई।
हुकमी उत्तम नीचु हुकीम लिखि दु ख सुख पाई अहि।
इकना हुकमी वखसीस इकि हुकमी सदा भवाइ अहि।
एको नामु हुकमु है, नानक सतिगुरु दीआ बुझाई जीऊ॥"

गुरु नानक के मत से सूर्य, चन्द्र, ऋतुएँ, धरती आदि समस्त सृष्टि का प्रत्येक अंश उसी द्वारा निर्मित एवं प्रकाशित है। उन्हें सर्वत्र भगवान का सौन्दर्य बिखरा लगता था। समस्त सृष्टि हर समय उस अनन्त सत्ता की आरती उतारती लगती थी। वे कहते हैं—

"गगनु मैं थालु रवि चन्दु दीपक बने,
तारिका मण्डल जनक मोती।
धूपु मलि आनलो पवणु चँवरो करे,
सगल बनराई फूलत जोती।"
कैसी आरती होइ भवखंडना तेरी आरती।
अनहता सबद बाजत भेरी।"

देखिए, कैसी अलौकिक आरती है जिसमें आकाश आरती का थाल है, सूर्य और चन्द्र के दीपक हैं, तारक मंडल ही हीरे मोती हैं, समस्त वन प्रदेश ही पुष्प है, मलयानिल धूप और पवन चँवर है और निरंतर होने वाला अनहद नाद भेरी का शब्द है। जिस असीम सत्ता की ऐसी अलौकिक आरती हो रही हो, उसे पार्थिव आरती की क्या आवश्यकता ?

भगवान के सर्वव्याप्त होने की पुष्टि उन्होंने मक्का में काजी से यह कहकर की कि जिधर भगवान नही है उधर ही मेरे पैर कर दो। जपजी में उन्होने भगवान की शाश्वत महिमा का वर्णन किया है।

गुरु नानक इस्लाम के एकेश्वरवाद और हिन्दुओं के ब्रह्मवाद से प्रभावित थे और मूर्तिपूजा को व्यर्थ मानते थे। उनका ईश्वर घट-घट वासी था और उसका सर्वोत्तम निवास-स्थल भक्त का हृदय ही था। हृदय ही वह मन्दिर था जिसमें भगवान रहता था। मुल्ला द्वारा यह पूछने पर कि तुम्हारा भगवान कैसा है और कहा रहता है, उन्होने शरीर रूपी मस्जिद को उसका घर बताया जहा खुदा नित्य बाग देता रहता है।

उन्होने वेदान्त के "मैं ही ब्रह्म हूँ" (अहम् ब्रह्मास्मि) के स्थान पर भगवान को सर्व शक्तिमान और मानव को उसके सामने अति तुच्छ माना।

भगवान और भक्त के बीच किसी माध्यम की उपस्थिति उन्हे असहनीय थी। वे अवतारवाद मे अविश्वास करते थे। उनके विचार मे मरने के बाद कोई पैगम्बर अथवा गुरु भी अपने अनुयायी की पैरवी करने के लिए भगवान के दरबार मे नही मिल सकता था। ससार मे भी किसी सुख की प्राप्ति का उन्होने दावा नही किया। यहाँ तक कि धार्मिक कृत्य करने से स्वर्ग के सुख और ऐश्वर्य, कामधेनु और कल्पवृक्ष आदि की भी आशा नही दिलाई। उनका एकमात्र उद्देश्य अह को नष्ट कर भगवान से एकात्म हो जाना ही था।

भक्त और भगवान के बीच व्यक्तिगत सम्बन्धो मे पति-पत्नी के सम्बन्ध को सर्वोत्तम मानते थे। उनके विचार मे जिस प्रकार एक अच्छी पत्नी हर समय तन, मन, धन से अपने पति की सेवा में लगी रहती है, उसी प्रकार एक सच्चे भक्त को भगवान की भक्ति मे लगा रहना चाहिए।

योगियो की तरह सब वस्तुओ के त्याग को ही वे धर्म नही मानते थे। उनके धर्म का सम्बन्ध बुद्धि के स्थान पर आत्मा से अधिक था। भक्ति द्वारा ही ईश्वर के साथ तादात्म्य स्थापित करके ससार-चक्र से मुक्ति पाना सभव था। भगवान का निवास-स्थल शरीर है और उसी के द्वारा ईश्वर की प्राप्ति होती है, अतः उसे नाना प्रकार के दु ख देना या उससे उदासीन रहना, उन्हे ठीक नही लगता था। शरीर को वे भगवान की अमूल्य भेट मानते थे। अत उन्होने ज्ञान की प्राप्ति के लिए हठयोग, प्रायश्चित और शरीर यातना के साधनो का घोर विरोध किया।

ससार की ब्रह्ममयता मे वे विश्वास करते थे। खेती की रक्षा करते समय चिड़ियो को दाने चुगते हुए देखकर वे अनायास ही कह उठे—

"रामजी की चिडिया, राम जी का खेत।
खाओ री चिडिया भर भर पेट।"

उनका कहना था कि स्वय को समझने पर सारा धर्म समझ मे आ जाता है। मन जीतने से सारा ससार जीता जाता है ('मन-जीते जग जीत')।

उन्होने धार्मिक जीवन का प्रमुख अंग प्रार्थना और नाम-स्मरण को माना है। उनके विचार मे जिस प्रकार मैले कपड़े को साबुन से धोकर स्वच्छ कर लिया जा सकता है, उसी प्रकार प्रार्थना मन के समस्त कलुषो को धो देती है। उन्होने नाम-स्मरण को ईश्वर-प्राप्ति का प्रधान साधन माना है। उसी से मुक्ति की प्राप्ति हो सकती है।

वे नाम रूपी दीपक मे अपने दुख रूपी तेल को डालते है। नाम रूपी दीपक दुख रूपी तेल को सोखकर प्रकाश देता है और इस प्रकार वे यम के भय से छुटकारा पा जाते है।[1]

उनके विचार में पापो से भरे मन को नाम-स्मरण ही शुद्ध कर सकता है।[2]

वे नाम को समस्त रोगो की एक मात्र औषध मानते थे।[3] उनके विचार में नाम-स्मरण के बिना जीवन व्यर्थ रहता है।[4] वे हरि नाम के सिवा अन्य सब बातों का मागना व्यर्थ समझते थे। उनके लिए 'नाम' ही एक मात्र धारण करने की वस्तु थी।[5]

गुरु नानक का ईश्वर प्रेम, स्वतन्त्रता, निर्भयता, परोपकारिता एवं भ्रातृत्व भावना का उपदेश देता प्रतीत होता है। उनकी आस्था जाति-पाति, ऊँच-नीच, और लिग-भेद से ऊपर उठे हुए भक्तिमार्ग मे थी। उनका दृष्टिकोण अन्तर्मुखी और आध्यात्मिक था जो अहंकार और स्वार्थपरता का विनाश कर नम्रता का पाठ पढाता था। मानवता की सेवा को ही वे सच्ची आराधना मानते थे। उनकी दृष्टि में प्रत्येक व्यक्ति आदरणीय था क्योकि ईश्वर सबमे व्याप्त रहता है।

---

1. "दीवा मेरा एक नाम दु.ख बिच पाया तेल,
   उन चानरण ओह सोख्या चूका जमीसयो मेल।"
2. "भरिए मन पापा के सग ओह वोपे नावै के रग।"
3. "सरब रोग का ओखध नाम।"
4. "बिन नावैं क्या जीवना।"
5. "एँ जी क्या मांगो किछ रहे ना दीसै इस जग में आया जाई।
   नानक नाम पदार्थ दीजै हिरदै कठ बनाई।"

गुरु नानक के उपदेशो की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि वे व्यक्ति और उसके व्यापार के अनुरूप होते थे।[1] किसान को ईश्वर का तत्व शरीर को खेत और आत्मा को हलवाहा, सत्कर्मों को बीज आदि के रूपक से समझाया। सच्चे मुसलमान की व्याख्या के लिए कहा कि सच्चा मुसलमान वही है जो करुणा रूपी मस्जिद में सत्य रूपी चटाई, सत्य की कमाई रूपी कुरान, नम्रता रूपी सुन्नत, शील रूपी रोजा, सत्य आचरण रूपी काबा, सत्य रूपी पीर और सत्य आचरण को दैनिक प्रार्थना मानना है।[2] व्यापारी को उन्होने व्यापार का रूपक बांध कर समझाया। हिन्दुओ के हर कार्य के लिए मुहूर्त निकालने की आदत की अवहेलना करते हुए कहा कि मृत्यु न

---

1 (अ) किसानो के प्रति कही गयी उक्ति—

मन हाली किरसानी करणी सरम पानी तन खेत।
नाम बीज सतोख सुहागा रख गरीबी वेस।
माओ करम कर जमसी से घर भाग देख।

(आ) दुकानदारो को उन्होने कहा—

"हाण हट कर आरजा सच नाम कर वथ।
सुरत सोच कर भाडसाल तिस विच तिस नूं रखे।
वणजारियाँ सिउ ठणज कर लै लाहा यन हस।"

(ई) वाणिज्य करने वालो के प्रति उक्ति—

"सुण सासत सौदागरी सत घोडे लै चल।
खरच बन चगि आईयाँ मत मन जानैं कल।
निरकार कै देस जाहि ता सुख लहिह महल।

(उ) नौकरी करने वालो के प्रति उक्ति—

"लाए चित्त कर चाकरी मन नाम कर कम।
वन वदीया कर धावणी ता को आखै धन्न।
नानक देखे नदर कर चणै चव गण वन॥"

2. "मिहर मसीति सिदकु मुसला हकु हलालु कुराणु।
सरम सुन्नति सीलु राजा होहु मुसलमाणु।
करणी कावा सचु पीरु कलमा करम निवाज।
तसबी सा तिसु भावसी नानक रखै लाज।"

तो सूरत (किस जाति का है) देखती है और न दिन और तिथि ही।[1] वास्तव मे वे धर्म-निरपेक्ष आदर्श मानव में विश्वास करते थे।

गुरु नानक ने किसी धर्म का विरोध नही किया। इसके सम्बन्ध मे वे समन्वयवादी दृष्टिकोण रखते थे। उनका विरोध धर्म विशेष से न होकर धर्म के बाह्याडम्बरों से था। जब नाथ सम्प्रदाय के सिद्ध योगियों ने गुरु नानक को योगी का वेश बनाकर अपने गुरु गोरखनाथ जी को प्रणाम करने के लिए कहा तो उन्होने कहा कि वास्तविक योगी बाह्य वेशादि से नही, वरन् आध्यात्मिक कर्मो से होता है।

गुरु नानक किसी से द्वेषभाव नहीं रखते थे। मुलतान मे जब वे गए तो वहा के फकीरो ने उन्हे दूध का भरा कटोरा भेजा जो यह इंगित करता था कि मुलतान साधुओ और फकीरों से भरपूर है और उनके लिए कोई स्थान नही है। गुरु नानक ने उसमें चमेली का फूल डालकर दूध का कटोरा वापस कर दिया। इस प्रकार उन्होने फकीरो को यह सदेश दिया कि वे उनके कार्य में बाधक नही होगे, वरन् अपने विचारो की सुगन्ध से सबको सुवासित करते रहेगे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि गुरु नानक एक अनन्य भक्त, महान् सत, साधक, चिन्तक, उपदेशक, कट्टरता, रूढ़िवादिता, कर्मकाण्ड, अन्धविश्वासो आदि से मुक्ति दिलाने वाले महान् पुरुष थे। इन्होने भक्ति, ज्ञान, तथा कर्म मे सामंजस्य स्थापित किया। इनका प्रत्येक शब्द सत्य-धर्म का उपदेश देने वाला था। इन्होने पर-धर्म की निन्दा न कर उसी के आदर्श की ओर सकेत किया।

गुरु नानक और समाजवाद

गुरु नानक संत और महान् चिन्तक होने के साथ-साथ सच्चे अर्थों मे समाजवादी थे। आज से पाँच सौ वर्ष पहले—जब कि 'समाजवाद' एक विशेष वाद के रूप में प्रचलित भी नही हुआ—उन्होने

---

1. "मरीणा न मूरतु पुछिया पुछी थिति न वार।"

न केवल इसके अर्थों को समझा, वरन् उसका प्रचार किया और जन-साधारण को समाजवादी जीवन यापन करने की प्रेरणा दी।

आज के इस भौतिकवादी युग मे साम्यवाद, समाजवाद आदि अनेक शब्दो का प्रचलन हो गया है। साम्यवादी समझते हैं कि मानवता के समस्त दुखो को दूर करने का एकमात्र उपाय आर्थिक समता ही है। आर्थिक विषमता के दूर होते ही ससार की सारी समस्याएं स्वय सुलझ जावेगी। उसे एक व्यक्ति का करोडपति और दूसरे का दाने-दाने को मोहताज होना सहन नही है। व्यक्ति इस वाद में एक मशीन का पुर्जा बनकर रह जाता है।

समाजवाद भी कुछ अर्थो मे इस विचारधारा से साम्य रखता है। वह प्रत्येक मानव की दैनिक आवश्यकताओ की पूर्ति को आवश्यक मानता है। (समस्त व्यक्तियो को समान अधिकार देने मे विश्वास करता है, यद्यपि इस बाद मे व्यक्ति एक स्वतत्र इकाई है तथापि उसका बल और सहारा केवल आर्थिक है, आध्यात्मिक नही। इन सब वादो ने मानव की भौतिक उपलब्धियो की समानता पर ही अधिक बल दिया है मानवता की आत्मिक उन्नति से उसे कोई सरोकार नही दिखाई देता।

गुरु नानक ने जन-साधारण को अपना जीवन समाजवाद के अनुरूप ढालने की प्रेरणा दी। उन्होने जन साधारण के समक्ष समाजवाद का एक नवीन रूप रखा। उनकी समाजवाद की भावना के अनुसार जहाँ मनुष्य के लिए अपनी मेहनत और ईमानदारी से धन कमाता वाछित था, वही धन कमाने पर उसे अपने स्वय के लिए तथा दूसरो पर व्यय करना भी आवश्यक था। मानव का सहारा और बल धन न होकर भगवान का नाम और उसका स्मरण था।

उनके समाजवाद मे सब लोग एक साथ सगत मे बैठ कर भजन, पूजन-कीर्तन आदि कर सकते थे। उनकी चलाई हुई लगर की प्रथा मे बिना जाति-पाति अथवा आर्थिक स्थिति का भेद-भाव किए सब एक साथ एक ही प्रकार का भोजन करते थे। उनके सह-भोज मे सम्मिलित राजा भी वही भोजन उसी परिवेश मे करता था जिसमे एक अत्यन्त निर्धन। लगर की प्रथा मे एक विशेष विचारणीय

बात यह है कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी श्रद्धा और सामर्थ्य के अनुसार इसमें सहयोग देता है और केवल अपनी स्वय की आवश्यकता पूर्ति ही कर सकता है। इसमें सहयोग केवल आर्थिक ही नहीं, शारीरिक श्रम भी देय माना जाता है। आज भी कोई व्यक्ति पानी भर कर, कोई जूते उठाकर और उन्हे यथास्थान रखकर, कोई जूठे बर्तन माजकर कोई खाना बनाकर और कोई उसे खिलाकर इसमें समान रूप से भाग ले सकता है। सद्गृहस्थ की स्त्रियाँ जिस स्नेह से एक साथ बैठकर भोजन बनाती है, उससे ऐसा प्रतीत होता है कि एक बडा परिवार भोजन कर रहा है जिसका प्रत्येक सदस्य समान महत्त्व रखता है।

पूजा में भाग लेने वाले सब लोग समान माने जाते थे। जो जिस समय आता था उसी के अनुरूप सगत में अपना स्थान ग्रहण कर लेता था। अमीर अथवा ऊँचे पद पर आसीन व्यक्ति भी अगर बाद में आए तो उसे पीछे बैठना पड़ता था। आजकल के समान बैठने का स्थान सामाजिक पद या स्थिति के अनुरूप आरक्षित नही किया जाता था। भगवान के दरबार मे सब एक समान थे, अतः गरीब या अमीर में कोई भेद-भाव नही था।

इन सब प्रथाओ के प्रचलन से गुरु नानक ने ईश्वर की एकता, सामाजिक समानता तथा भ्रातृत्व की भावना का प्रसार किया। जिस ज ति-पाति और ऊँच-नीच के भेद-भाव को आज के युग में बलपूर्वक, कानून द्वारा भी पूर्ण रूप से दूर नही किया जा सका, उसी को उन्होने हृदय मे आस्था के द्वारा सहज प्रेम की भावना से स्थापित कर दिया।

गुरु नानक स्वय कर्मयोगी थे और वे दूसरो के कमाए हुए धन से आनन्द मनाकर जीवनयापन करने को बुरा मानते थे। वे इस साम्यवादी विचार के—कि अगर दूसरो के पास अधिक है, दूसरे ने अधिक मेहनत करके कमाया है तो उसे छीन लो—विरुद्ध थे। उनकी दृष्टि में परायी वस्तु हिन्दू के लिए गोमास और मुसलमान के लिए सुअर के मास के सदृश समान रूप से त्याज्य थी।[1]

---

1. "हक पराया नानक उस सूअर उस गाय।"

गुरु नानक से अधिक और कौन समाजवादी होगा जो अपना सम्बन्ध देश के निम्न से निम्नस्तर के व्यक्तियों के साथ मानते थे। सम्पन्न व्यक्तियो से अपना सम्बन्ध स्थापित करने मे वे गौरव का अनुभव नही करते थे।[1] गुरु नानक की आस्था थी कि जहाँ पर नीचो के साथ सद्व्यवहार होता है, वही पर भगवान की कृपा होती है।[2]

गुरु नानक ने धर्म में भी समाजवाद का पूरा पालन किया। उनका धर्म ऐसा था जिसमे सभी व्यक्ति समान रूप से भाग ले सकते थे। कोई विशेष धार्मिक वाद उन्होने नही चलाया। उनका धर्म सच्चे अर्थों मे मानव धर्म था।

गुरु नानक ने अपने आदर्शों को अपने जीवन में भी अवतरित किया। मलिक भागो के ब्रह्म भोज को [ठुकरा कर अकिंचन बढई भाई लालो का आतिथ्य स्वीकार करना बतलाता है कि उनके लिए सामाजिक पद-मर्यादा सारहीन थे। सत्य की कमाई को ही वे ग्राह्य मानते थे। जो कमाई समाज के एक अंग का खून चूसकर कमाई गयी हो, उससे उनका कोई सरोकार नही था। उनके विचार मे यदि खून के छींटे पडा हुआ वस्त्र गंदा कहला सकता है तो उन लोगो के मन को किस प्रकार शुद्ध माना जा सकता था जोकि दूसरो का खून चूस कर गन्दे हो चुके थे ?

"जे रत लग्गे जामेआ जामा होए पलोत।
जो रत पीवै मानसा तिन क्यो उत्तम चीत।"

उनके विचार मे सच्चा समाजवाद अपने धन, ऐश्वर्य और उपलब्धियो को सबमे बाँट कर उपभोग करना सिखलाता था पर

---

1. "नीचा अंदरि नीच जाति,
   नीची हूं अति नीच।
   नानक तिनके संग साथ,
   वडियां सूं क्या रीस।" – समाजवाद का उदाहरण
2. जित्थे नीच सैंमालिअनि,
   तित्थे नदरि तेरी बखसीस।

शर्त यह थी कि धन अथवा अन्य वस्तु का देने वाला यह गर्व न करे कि उसने अपना सब कुछ बाँटा है, अथवा अपने इस कृत्य से धन या आतिथ्य ग्रहण करने वालों से किसी प्रकार की कृतज्ञता की भावना की अपेक्षा न कर सके। उसका दान यह सोचकर ही होना चाहिए कि जिसकी वस्तु है, उसी को दे रहा हूँ।

इसका एक बडा सुन्दर उदाहरण उनके सुल्तानपुर में की गयी नवाब की नौकरी के समय का है। वे अपनी कमाई का एक बडा अ श साधु संतो और प्रार्थियो में बाँट देते थे। अपने लिए अपनी आवश्यकता भर ही रखते थे। कई बार तो दीन-दुखियो को देखकर नवाब के भण्डार मे से दे देना भी अनुचित नही समझते थे।

उनके समाजवादी दृष्टिकोण का एक अन्य ज्वलत उदाहरण अपनी गद्दी अपने पुत्रो को न देकर अपने एक शिष्य भाई लहणा को देने में है। उस शिष्य को भी गद्दी इस लिए नही दी गयी क्योंकि वह गुरु जी को पसन्द था, वरन् इसलिए दी गयी क्योकि वही सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति था, जो उनके आदर्शों को लेकर चल सकता था। इस चयन के बारे में कहा जाता है कि गुरु नानक अपने शिष्यो को परीक्षा लेने के लिए घोर जगल मे ले गए। अन्तिम परीक्षा के समय गुरु द्वारा आदेश मिलने पर अन्य शिष्य तो भाग गए, केवल यही एक गुरु-आज्ञा का पालन करने के लिए रह गया। गुरु नानक अपने इस शिष्य की आत्मनिष्ठा और कर्तव्यपरायणता से अत्यन्त प्रभावित हुए और उसे अपनी गद्दी का अधिकारी बना दिया। अपने जीवन काल में ही उन्होने इमे गद्दी पर आसीन किया और भाई बुडढा को उसका तिलक करने के लिए कहा। गुरु नानक की पत्नी ने उनके इस चुनाव के लिए बहुत बुरा भला कहा। उसने पूछा कि उनके बाद घरवालो का निर्वाह किस प्रकार होगा? उनका केवल एक ही उत्तर था कि परमेश्वर सबकी रक्षा करता है।

साराश यह है कि "गुरु नानक का समाजवाद रूढिगत समाजवाद नही था। वह समस्त मानवता मे समान रूप से एक ही ईश्वर की अभिव्यक्ति की अनुभूति से उत्पन्न समाजवाद था जो सच्चे अर्थों मे एकात्मभाव और भ्रातृत्व की भावना का प्रतिपादन करता था। उनकी सम्मिलित प्रार्थना मे भी सबके भले की माग की गई

है । "घाल खाए किछु हस्थहु देइ, नानक राह पछाणहि सेई"[1] उनके समाजवाद को भावना को व्यक्त करता है ।"

समाज सुधारक गुरु नानक

गुरु नानक सच्चे समाजवादी थे और उनका मात्र उद्देश्य पीड़ित मानवता का उद्धार करना था। वे एक ऐसे आदर्श समाज की कल्पना करते थे जिसमे न कोई छोटा था ना कोई बडा। ना कोई ऊँच था ना कोई नीच। वे समस्त प्राणीमात्र को हँसता-खेलता खुशहाल, फलता-फूलता देखना चाहते थे। उन्होने देखा कि प्रत्येक धर्मावलम्बी अपने-अपने धर्म को रूढियो और चिन्हो के घेरे मे बाधे हुए है। जाति–विशेष के अपने विशेष सस्कार थे। मनुष्य की वेशभूषा से ही उसकी जाति का अनुमान हो जाता था। हिन्दू अपने कर्मकाण्डो की पैरवी करते थे तो मुसलमान अपनी। हिन्दुओ के छुआछूत तथा धर्म के नाम पर होने वाले अत्याचारो से घबराकर अछूत कहलाने वाले बहुत से व्यक्ति इस्लाम धर्म की भ्रातृत्व भावना के विशाल हाथो मे समाते चले जा रहे थे।

सिद्धो और योगियो मे जातिवाद नही था परन्तु या तो वे जनता के प्रति उदासीन थे अथवा उनके हठयोग की प्रक्रियाए इतनी कठिन थी कि साधारण मनुष्य उसे अपनाने में असमर्थ था। फिर ये तो पूर्ण गृहत्याग को प्रधानता देते थे, दूसरे इनकी भी अपनी विशिष्ट वेशभूषा थी और था जीवन निर्वाह का अपना अलग ढग। इसके अतिरिक्त इनका ईश्वर इतना सूक्ष्म और अव्यक्त था कि उस तक पहुँचने की कोई हिम्मत ही नही कर सकता था।

भगवान बुद्ध ने अपने उपदेशो द्वारा पीडित मानवता के उद्धार का प्रयत्न किया था पर उनका उद्देश्य प्रथमतः अपने स्वय का उद्धार करना था, अत वे भी साधारण जनता के इतने निकट नही आ सके।

---

1. "जो मनुष्य अपनी मेहनत और ईमानदारी की कमाई को दूसरो के साथ बाट कर खाता है वही भगवान के सच्चे मार्ग को पहचानता है।"

उनके शरीर उनके बुरे कर्मों से दूषित हैं और उनके हृदय में झूठ समाया है।[1]

तिलक छापाधारी व्यक्तियों के बाह्याचरण पर आक्षेप करते हुए वे कहते हैं—

"गऊ बिराहमरण कउ करु लावहु,
गोबर तरणु न जाई।
धोती टिका तै जप माली,
धानु मलेछा खाइ।
अंतरि पूजा पडहि कतेबा,
सजमु तुरका भाई।
छोडि ले पाखडा,
नामि लइऐ जाहि तरदा॥

अर्थात् गाय तथा ब्राह्मण से तो तू कर (टैक्स) लेता है। गोबर का चौका लगाने से तेरी गति नहीं होगी। धोती बाधे है, माथे पर तिलक है और हाथ में माला और माल म्लेच्छों का खाता है। पुस्तके पढता है, अन्तःकरण से भक्त बन कर पूजा कर। इन पाखण्डों को तू त्याग दे। नाम के सच्चे जाप से ही तेरा उद्धार होगा।

मुसलमानों के लिए उन्होंने कहा है '—

"माणस खाणे करहि निवाज"

अर्थात् मनुष्यों को खाने वाले (अत्याचार करने वाले) नमाज पढते हैं।

तीर्थ स्नान की व्यर्थता सिद्ध करते हुए वे कहते हैं—

"अठ सठि तीरथ जे नावहि
उतरै नाहि मैलु।
जिन पट अ दरि बाहरि गुदड
ते भले ससार॥"

---

1. "कुबुद्ध डूमनी, कुदया कसावन, परनिन्दा घट चूहडी मुट्ठी क्रोध चण्डाल कारी कड्डी क्या थिये जद चारैं बैठियाँ नाल"

बतला दिया कि सच्चा जनेऊ सन्तोष, करुणा, सयम, सत्य आचार आदि गुणो के धारण करने मे ही है।

सुलतानपुर मे काजियों की जमात मे नमाज पढने की प्रथा का उपहास करते हुए उन्होंने यह भी स्थापित किया कि सच्ची नमाज या पूजा मानसिक होती है, भौतिक नही। उन्होने परम्परागत रूढियो का खण्डन न करके उनका एक नया अर्थ प्रस्तुत किया।

कहते हैं कि एक बार सूर्यग्रहण के अवसर पर उन्होंने खाना बनाना प्रारम्भ कर दिया। ब्राह्मणो द्वारा सूर्य ग्रहण के कारण सूतक होते हुए रसोई बनाने पर एतराज किए जाने पर उन्होने कहा—

"जे करि सुतकु मन्नीये समतै सूतकु होइ।
गोहे अतै लकडी अन्दरि कीडा होई।
जेते दाणे अन्न के जीआ बाझु न कोई।
सूतकु क्यू करि रखीये सूतक पवै रसोई।
नानक सूतक ऐव न ऊतरै गियान ऊपारे धोई।

अर्थात् अगर तुम सूतक मानो तो सभी जगह सूतक है। गोबर और लकडी मे, अन्न के प्रत्येक दाने मे जीव है। पानी जो सबको हरीतिमा प्रदान करता है उसमें भी जीव है। अत इनमे से किसी के प्रवेश मात्र से ही रसोई मे सूतक लग जावेगा। गुरु नानक कहते हैं कि सूतक वस्तुओ के परित्याग से नही, वरन् सच्चे ज्ञान से ही दूर हो सकता हैं।

ब्राह्मण अपनी रसोई बनाते समय जमीन को धोकर उसे एक रेखा खीच कर सीमित कर लेते थे। उसके अन्दर किसी भी अन्य व्यक्ति के आ जाने पर उनकी रसोई त्याज्य और अशुद्ध हो जाती थी। इस प्रथा को गलत बताते हुए उन्होने कहा कि वे खाना बनाने के लिए एक स्थान को धोकर उसके चारो ओर एक लकीर खीच लेते हैं। उसके अन्दर बैठकर स्वय झूठे होने के कारण वे खाना छूने की मना करते हैं क्योकि ऐसा करने से वह अशुद्ध हो जावेगा। लेकिन

गुरु नानक ने दलित वर्ग के उद्धार के साथ-साथ नारी का भी उद्धार किया। उस समय नारी जाति भी अत्यन्त पीड़ित थी। स्त्री को केवल मात्र भोग की वस्तु के समान माना जाता था। समाज में उसका कोई स्थान नही था। स्त्री के लिए असूर्यम्पश्या होना उसका प्रधान गुण था। धार्मिक कृत्यो की वह अधिकारिणी नही थी। उसके लिए शास्त्रो का अध्ययन वर्जित था। उसका न तो कोई अपना निजी धर्म था और न ही अपनी आत्मिक उन्नति का उसे कोई अधिकार। उसका एक मात्र कार्य घर के काम-काज, सामाजिक और वैयक्तिक काय करना ही था। उसकी दशा किसी अछूत अथवा खरीदे हुए दास से अधिक अच्छी नही थी।

मुसलमान भी स्त्री को सात परदों में छिपाकर रखने में विश्वास करते थे। जब भी कोई आक्रमण होता तब स्त्री को भी अन्य सम्पत्ति के समान लूट लिया जाता तथा उसके साथ मनमाना व्यवहार किया जाता था। पति की मृत्यु होने पर उसे जीवित जलना पड़ता। कई जगह तो लड़की को पैदा होते ही मार डाला जाता था।

गृहस्थी तो स्त्री को अनादर की दृष्टि से देखते ही थे, वैरागी भी उनसे घृणा करते थे, क्योकि वह उनके तप को भंग कर देती थी। वे उसे मायारूपिणी और नरक का मूल मानते थे। वे उसका उद्धार तो क्या करते, उसका सम्मान तो क्या करते, वे तो उसकी छाया से भी दूर भागते थे। अतः नारी की दशा अत्यन्त शोचनीय थी और वह अशिक्षित और पूर्णतया अपने अधिकारो से वचित थी।

गुरु नानक ने नारी की महत्ता का प्रतिपादन किया। उसको पुरुष के बराबर माना। सब धार्मिक कृत्यो में उसको समान रूप से भाग लेने दिया। उन्होने उसे अपनी आत्मिक उन्नति के लिए स्वयं उत्तरदायी माना। धार्मिक सम्मेलनो के द्वार उसके लिए खोल दिए। उन्होंने नारी की निंदा करने वालों से कहा कि नारी अनिन्दनीय है। क्योकि उनके विचार में—

"भंडि जन्मीए भंडी निम्मीऐ भंडि मगणु वीआहु।
भंडहु होवै दोसती, भंडहु चलै राहु।

अर्थात् यदि वे अड सठ तीर्थों में स्नान भी कर ले तब भी उनके मन की मैल नही उतर सकती। वही पुरुष ससार में भले हैं जो अन्दर शुद्ध और बाहर मैले हैं।

योगियो के विशेष प्रकार के पहिनावे और जीवन-यापन को वे योग-साधना के लिए आवश्यक नही मानते। उनका विचार था कि वे सच्चा योग ना तो कथरी मे है, न डंडे मे और ना ही सारे शरीर पर भस्म चढाने मे ही। सिंगी बजाने और सिर मुडवाने मे भी योग नही है। 'अ जन' मे भी 'निरजन' रहना ही सच्ची योग साधना है।[1]

जाति पाति के भेदभाव की व्यर्थता तो उन्होने अपने आचरण से ही सिद्ध कर दी। उनके शिष्यो में मर्दाना मुसलमान था तो लालो वढई। इसके अतिरिक्त जाट, लुहार तथा अन्य नीच माने जाने वाले लोग उनके शिष्य थे।

उन्होने न केवल उक्ति द्वारा धर्म के नाम पर होने वाले पाखडो, अत्याचारो, अन्धविश्वासो तथा बाह्याचारो का ही खण्डन किया, वरन् बहुत से बुरे कहलाए जाने वालो का भी हृदय परिवर्तन कर उद्धार किया। तालम्बा मे यदि उस सज्जन नामक ठग का जो मंदिर और मस्जिद के बहाने आने-जाने वाले यात्रियो को लूटकर उन्हे मार डालता था, उद्धार किया तो काम रूप की नर्तकी का भी उद्धार किया जो अपने आकर्षण से मर्दाना को तो बांध ही चुकी थी उन्हे भी बाध लेना चाहती थी। वे अपनी यात्राओ के दौरान अधिकाशत. अछूतो के साथ ही रहते थे।

उन्होने यदि एक ओर हिन्दुओं के तीर्थस्नान, उपवास, सूर्य को जल चढाना, छूत-छात, सूतक मानने आदि की निन्दा की तो दूसरी ओर मुसलमानो को भी रोजे और नमाज का एक नया ही अर्थ बतलाया।

---

1. "योग ना किथा जोग न डडे जोग ना भसम चढाइए।
   जोग ना मुडी मूड मुडाइए जोग न सिंगी डाइए।
   अ जन माहि निरजन रहित जोग जुगति तऊ पाइए।"[2]

सत्कर्मों का करना अत्यन्त आवश्यक है। गुरु नानक ने इसीलिए सत्य से भी ऊपर सत्य के आचरण करने को माना है। उनका कहना था कि दूसरो को दोषी ठहराने की अपेक्षा अपने स्वयं के कार्यों को दोष देना चाहिए, क्योंकि सब अपने किए हुए कर्मों के फल को ही भोगते है। वे कहते थे कि जो भी कर्म हम करते हैं, वह हमारे माथे पर लिखा रहता है। उसे उस सर्वव्यापी, सर्वद्रष्टा ईश्वर से छिपाना असम्भव है। उनके विचार में सद्कर्मों का करना अत्यन्त आवश्यक था।

जब गुरु नानक ने हिमाचल प्रदेश की यात्रा की तो वहा सिद्धों और सतों से मिले। गुरु नानक ने उन्हे भी उलाहना दिया कि तुम्हे ससार के दु.खो से क्या मतलब ? (तुम तो यहां आनन्द से समाधि लगा कर बैठे हो। सच्चा भजन तो ससार में रहकर मनुष्य मात्र की सेवा करने से हो होता है।

उनके अनुसार ईश्वर यदि सत्य है तो उसकी रची सृष्टि भी असत्य नही हो सकती, अत. कछुए की तरह अपने खोल मे बन्द हो जाने के स्थान पर मनुष्य को अपने सासारिक कार्यों से उदासीन नही होना चाहिए। इस प्रकार का आचरण करने से हम उस परमपिता परमेश्वर के दिए हुए सौन्दर्य की उपेक्षा करते हैं।

नानक कहते थे कि सारा ससार दुखी है, "नानक दुखिया सब ससार सो सुखिया जिस नाम आधार।" यहाँ सुख माँगने पर दुःख की प्राप्ति होती है। परन्तु इसका कारण समस्त विकारों का होना ही है। एक भगवान की भक्ति के बिना कोई मुक्त नही हो सकता।[3] ससार मे प्रत्येकप्राणी सुख की माग करता है, दुख को कोई नही चाहता। यह सत्य होते हुए भी कि संसार दु'खों से परिपूर्ण है, उसमें पाप और असत्य की भरमार हैं—वह त्याज्य नही है। मनुष्य का कर्तव्य है कि वह इन सब बाधाओ से लड़ता हुआ उन पर विजय प्राप्त करे।

---

1. "सुख मागत दुख आगल होये,
सगल विकारी हार पिरोये,
एक बिना झूंठे मुक्त ना होयै।"

मंडु मुग्रा मडु मालीऐ, भडि होवै वधानु ।
सो किउ मदा आखिऐ जित जम्महि राजानु ।"

अर्थात् उस नारी की निन्दा किस प्रकार की जावे जिससे मनुष्य जन्म लेता है, जिसके पेट में रहकर उसका निर्माण होता है तथा जिससे सगाई और विवाह होता है। स्त्री से ही ससार का मार्ग अर्थात् उत्पत्ति-क्रम चलता है । जब एक स्त्री मर जाती है तो दूसरी स्त्री विवाह के लिए खोजी जाती है और स्त्री द्वारा ही विशाल बधन बधते हैं ।

इस प्रकार हम गुरु नानक को बहुत बडे समाज सुधारक के रूप में पाते हैं। इन्होने समाज की कुरीतियो की जड़ पर कुठाराघात किया। संसार मे रहते हुए भी उससे अलिप्त रहना सिखलाया। उन्होने मानवता के भौतिक उद्धार के साथ-साथ उसके लिए आध्यात्मिकता का मार्ग भी प्रशस्त किया जिसमे सच्चा सुख निहित रहता है ।

कर्मयोगी गुरु नानक

गुरु नानक की वाणी के अध्ययन से गीता का कर्मयोग स्मरण हो आता है। उन्होने संसार का त्याग न करके उसमे रहकर भी निर्लिप्त भाव से कर्म करने का उपदेश दिया है। यह पूछे जाने पर कि गृहस्थ मे रहते हुए तुम ससार–सागर को किस प्रकार पार कर सकोगे, उनका उत्तर था—

"जैसे जल महि कमल निरालय मुरगाई नीसाणो ।
सुरति शबद भवसागर तरियै नानक नाम बखाणै ।"

अर्थात् जिस प्रकार जल मे कमल रहता है अथवा जैसे जल पर बतख तैरती है उसी प्रकार शब्द (शब्द रूपी भगवान) मे 'सुरति' लगा कर भवसागर से पार हो जाऊँगा ।

उनके विचार मे जो जैसा कार्य करता है उसे वैसा ही फल प्राप्त होता है ।[1] आदमी जो बोता है वही काटता है ।[2] अत.

---

1. "जिसा करे सु तैसा पावै । आपि बीजि आपे ही खावै ।"

2 "जिसा बीजै तैसा लुणै ।"

वे समस्त सृष्टि को, उसके प्रत्येक प्राणी को उस परमपिता की सन्तान मानते थे। उनका कहना था कि परमात्मा एक है और उस एक के ही सब बालक हैं।[1] जब सब एक ही परिवार के सदस्य, एक ही पिता की सन्तान हो गए तो परस्पर वैमनस्य, द्वेष, एक दूसरे को हीन अथवा अस्पृश्य समझने का, आपस मे लड़ने-झगड़ने का तो प्रश्न ही नही रहता। वे भगवद्प्राप्ति के लिए मानवता की सेवा के मार्ग को श्रेष्ठ मानते थे।[2] उनका विचार था कि भगवान अपने सेवक को ही प्राणी मात्र की सेवा में लगाता है।[3] उनका कहना था कि मनुष्य का सर्वोत्तम कर्म मानवता की सेवा करना है और उसी के द्वारा वह फल-प्राप्ति अर्थात् ईश्वर की प्राप्ति कर सकता है।[4] भगवान की प्राप्ति चाहने वाले मनुष्य के लिए प्राणी मात्र की सेवा करना, मधुरभाषी और नम्र होना आवश्यक है। वे माधुर्य और नम्रता को समस्त अच्छाइयो और सद्गुणो का निचोड मानते थे।[5] उनकी कल्पना का आदर्श व्यक्ति लोभ, गर्व, इच्छा, क्रोध आदि से मुक्त था।[6] उन्होने जनसाधारण को अपने दैनिक कार्यों मे लगे रहते हुए मद, मोह, लोभ, अहकार, क्रोध, पर-निन्दा आदि दुर्गुणों को जीत कर तथा करुणा, दया, सतोष, सयम, सदाचार आदि को ग्रहण कर आदर्श जीवन निर्वाह करने की सलाह दी।

मानवता के वे कितने बड़े साधक होगे, मानव-कल्याण किस प्रकार उनके लिए सर्वोपरि होगा, यह उनके जीवन की एक छोटी-सी घटना से सिद्ध हो जाता है। कहते है कि एक बार गुरु नानक अपनी पैदल यात्रा के दौरान एक गाँव मे गए। वहाँ के निवासियो ने उनकी बहुत आव-भगत की। चलते समय उन्होने आशीर्वाद के रूप मे गाँव वालो को उजड जाने के लिए कहा। इसके बाद वे दूसरे गाँव

1. "एक पिता एकस के हम बालक"
2. "जो लोन्डी दे राम सेवक सेई काढया।"
3. "सेवक अपनी लायौ सेव।"
4. 'बिन सेवा फल कबहुँ न पावस, सेवा करणी सारी।"
5. "मिठत नीवी नानका गुण चंगिआईया तत्।"
6. "पढया मूरख आखीयै जिस लब लोम अहकार।"

गुरु नानक ने अपने जीवन के उदाहरण से एक सच्चे कर्म-योगी का आदर्श जनता के सामने रखा। निस्पृह संत होते हुए भी मानव-कल्याण के लिए जीवन का अधिकांश भाग यात्राओं मे बिताया। जीवन के अन्तिम भाग मे—जो उन्होंने करतारपुर मे बिताया—भी उन्होंने कोई आराम नही किया। एक साधारण किसान का जीवन बिताया। अपनी उपज से केवल आवश्यकता भर रखा, शेष सब लंगर में लगा दिया। कृषि-कार्य से बचे हुए समय को भी व्यर्थ न खोकर उन्होंने सगत को उपदेश देने अथवा आत्म-चिन्तन करने मे बिताया।

गुरु नानक और मानवतावाद

गुरु नानक से पहले और उनके समय में भी अनेक धार्मिक गुरु तथा उपदेशक हुए। उन्होंने विभिन्न सामाजिक कुरीतियो को हटाने की चेष्टा भी की, पर उनका एक मात्र उद्देश्य मानव को भौतिक स्तर से उठाकर आध्यात्मिक स्तर पर रख देना था। उनके उपदेश कभी सरल भाषा में प्रवाहित होते थे और कभी गूढोक्तियों मे। अपनी अनुभूति को उन्होंने सशक्त भाषा मे व्यक्त करके उस असीम सत्ता की ओर सकेत किया। पर उन्होंने मानव के मन और आत्मा को ऊपर उठाया, उसे माया-बन्धनो से मुक्त कर भवसागर को पार करने के अनेकानेक ढग बताए, परन्तु मनुष्य आत्मा के साथ शरीर भी है, उसे वे प्राय. भूल ही गए।

गुरु नानक का महत्त्व इस बात मे विशेष है कि उन्होंने विभक्त मानव की कल्पना न करके सर्वांगीण मानव की कल्पना की। उनके लिए शरीर भी उतना ही महत्त्वपूर्ण था जितनी आत्मा, क्योंकि शरीर ही तो वह मन्दिर अथवा मस्जिद है जिसके माध्यम से सत्कर्मों द्वारा ईश्वर की प्राप्ति हो सकती है। मानवता की सेवा को वे भगवान की सेवा का साधन मानते थे। उनकी यह उक्ति—"विचि दुनिया सेव कमाइये ता दरगै बैसन पाइए" उनके मानवतावाद का निचोड है। उनके विचार मे मानवता की सेवा ही भगवान की सेवा है। उनका आदर्श मानव भक्ति, कर्म और ज्ञान तीनो से युक्त था।

सिद्ध करने के लिए। रूपक के प्रयोग से वे थोड़े से शब्दों में बहुत वड़ी वात कहने मे समर्थ हो सके है।

गुरु नानक की सम्पूर्ण वाणी गेय है। अतः इनके काव्य में गीतिकाव्य के गुण—सरसता, माधुर्य, प्रवाहमयता तथा लय आदि स्वयं ही आ गए है। उनकी वाणी मे गउडी, आसा, गूजरो प्रभातो, वसन्त, भैरों, सारग, सोरठ, विलावल आदि अनेक राग-रागिनियो के दर्शन होते हैं जिनके कारण उनका काव्य अत्यन्त सगीतात्मक हो गया है।

गुरु नानक संत कवि थे। उनके काव्य मे अनेक रसो-शृंगार, वीर, रौद्र, वीभत्स, करुण, शान्त आदि तथा उनके अनुगामी भावों का प्रवेश अवश्य मिलता है किन्तु उनका प्रधान इस शान्त ही है। विरहिणी आत्मा की वियोग-भावना की तीव्रानुभूति कराने के लिए उन्होने वारहमासा की रचना की परन्तु काव्य-कला उनके लिए भावाभिव्यक्ति का साधन थी, साध्य नही।

भावो की अभिव्यक्ति का माध्यम भाषा ही होती है। गुरु नानक की भापा एक पर्यटक और सुधारक की भाषा थी जो जन-कल्याण के लिए, जन साधारण तक अपने विचार पहुँचाने के लिए प्रयुक्त हुई थी; अतः उसका सतरगी रूप स्वाभाविक ही था। उस अनेकरूपिणी भापा को यदि सधुक्कडी भापा के नाम से अभिहित किया जाय तो ठीक होगा। वह एक ऐसी भाषा थी जो मुख्यत मूल रूप में पूर्वी पंजावी होते हुए भी पश्चिमी पंजाबी, सिंधी, लहन्दा, रेखता, व्रज, गुजराती, पूर्वी हिन्दी, अरबी तथा फारसी आदि भापाओ के प्रभाव से अपने को अछूता न रख सकी। समस्त मानवता को एक मानने वाले व्यक्ति के अनुरूप ही उनकी भाषा भी अनेकता मे एकता का सदेश देती हुई प्रतीत होती है। अपने प्रवास काल में वे देश और विदेश के अनेक भागो में गए। उनका उद्देश्य जन-साधारण तक अपना विचार पहुँचाना था, अतः स्थानीय वोलियो और भापाओ में प्रचलित वोलचाल के शव्दो का उसमे आ जाना स्वाभाविक भी था। भापा इन्द्रधनुषो होते हुए भी सहज, सरल और

मे गए। यहाँ इन्हे बहुत बुरा भला कहा गया। इस गाँव के निवासी अत्यन्त कुसस्कारी और झगड़ालू थे। गाँव से विदा होते समय गुरु नानक ने कहा, "बसते रहो।" गाँव से निकल कर मर्दाना हैरान था। उसने गुरुजी से इस प्रकार के आशीर्वादो का महत्त्व पूछा। गुरु नानक ने कहा, "बुरे लोगो को बसते रहने का आशीर्वाद इस लिए दिया क्योकि वे जहाँ भी जावेगे अपने दुर्गुणों को फैलाएंगे। अच्छे कर्तव्यनिष्ठ सद्गुण-सम्पन्न व्यक्तियो का बेघरबार होकर इधर-उधर फैल जाना मानवता के हित मे था क्योकि सत्पुरुष जहाँ भी जावेगे उसी स्थान को अपने सद्गुणो की सुगन्ध से सुरभित कर देगे।" किसी के बसने अथवा उजडने का मूल्य गुरु नानक की दृष्टि मे केवल इसीसे आका जा सकता है कि उसका ऐसा होना मानवता के हित मे है अथवा अहित में।

गुरु नानक का कवि रूप

उच्च कोटि के तत्व-चिंतक, समाज-सुधारक और सत गुरु नानक एक रसज्ञ कवि भी थे। उनकी रूढ़िवाद के प्रति अश्रद्धा से उनका काव्य भी अछूता नही रहा है। कविता उनकी भावनाओं एव अनुभूतियो की अभिव्यक्ति का माध्यम थी, उसका ध्येय नही। काव्य-तत्व तो उनकी भाव-विभोर वाणियो मे स्वय ही आता चलता था। अलकारो का आग्रह उनकी रस-पूर्ण भाव सरिता के प्रवाह को अवरुद्ध न कर उसे और भी अधिक त्वरित गति से प्रवाहित होने में सहायक ही होता था, बाधक नही। उनके छन्द उनके भावो का अनुगमन करते थे।

गुरु नानक की वाणी मे अनेक अलकार आ गए हैं। उपमा और उत्प्रेक्षा की अपेक्षा उन्हे सागरूपक अधिक प्रिय था। इसका दर्शन सच्चे मुसलमान की व्याख्या, जनेऊ, उस अखंड सत्ता की आरती तथा किसान के प्रति उक्ति आदि मे सर्वत्र दृष्टिगत होता है। इनका रूपक सरल और बोधगम्य होता था। उसका प्रयोग वे कही तो दैनिक सत्याचरण की महत्ता को बतलाने के लिए करते थे तो अन्यत्र उस महान् सत्ता की सर्वव्यापकता तथा सार्वभौमिकता

तृतीय खण्ड

लेखकों की दृष्टि में गुरु नानक

१. सरदार हुकुमसिंह
२ सरदार गुरनामसिंह
३. डा० भाई जोधसिंह
४. डा० गोपालसिंह
५ डा० तरणसिंह
६. बलवन्तसिंह आनन्द
७. खुशवन्तसिंह
८. इन्द्रकुमार गुजराल
९. डा० प्रभाकर माचवे
१०. सरदार गुरमीतसिंह
११ डा० गोविन्दसिंह
१२. सत किरपालसिंह

बोधगम्य है। संप्रेषणशीलता, प्रवाहमयता, ओज, लालित्य आदि उसके सहज गुण हैं।

अतः यह कहा जा सकता है कि गुरु नानक संत, समाज सुधारक तथा मानवतावादी होने के साथ-साथ कवि भी थे। उन्होने शास्त्रोक्त रूढियो मे स्वतंत्र काव्य की रचना की जिसका प्रधान गुण किसी भी भाव को प्रभविष्णु, सरल एव सरस ढग से अभिव्यक्त करना था।

उपसंहार

अब तक के विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि गुरु नानक एक महापुरुष थे। वे शान्ति, प्रेम, एकता, भ्रातृत्व-भावना, धार्मिक, सामाजिक एव राष्ट्रीय एकता के सन्देशवाहक थे। उन्होंने योग-मार्ग को सरल भाषा मे समझाया तथा सन्यास के स्थान पर कर्मयोग की महत्ता का प्रतिपादन किया। उनका जीवन-उद्देश्य पीडित और दलित मानवता का उद्धार कर, धर्म के बाह्याचारो, रूढ़ियो एव अंधविश्वासो के गहन गर्त से निकाल कर धर्म का सही अर्थ समझाना था। उनका एक मात्र धर्म मानवता की सेवा करना था और उसी को वे भगवद्प्राप्ति का साधन मानते थे।

गुरु नानक कोरे अध्यात्मवादी अथवा समाजवादी ही नही वरन् ऐसे सामाजिक क्रान्तिकारी थे जिनके लिए मानव का मूल्य उसकी बाह्य मर्यादा, पद, धनादि मे निहित न रहकर उसकी आन्तरिक शुद्धता और उपलब्धियो मे निहित था। उनके लिए सत्य की बहुत महत्ता थी पर उससे भी ऊपर वे सत्य-आचरण को मानते थे। गुरु नानक ही वे पहले व्यक्ति थे जिन्होने ऐसे पूर्ण मानव की कल्पना को साकार करने की चेष्टा की जो भौतिक और आध्यात्मिक दोनो दृष्टियो से पूर्णतया विकसित था।

वैज्ञानिक युग में धर्म एवं गुरु नानक का संदेश | 1

—सरदार हुकुमसिंह

मानव की सृष्टि ईश्वर ने अपने रूप के अनुरूप की है अथवा वह उस विकास की प्रक्रियाओं का परिणाम है जो पदार्थ के अपने अन्दर विद्यमान शक्तियो के गतिशील होने से होता है, यह प्रश्न चाहे मानव के जीवन मे किसी प्रयोजन को निहित माना जाये या चाहे यह माना जाये कि पशु अथवा कीड़े के अस्तित्व की तरह ही मनुष्य का अस्तित्व है, यह प्रश्न समीचीन बना रहेगा। आहार, निद्रा, भय तथा मैथुन प्रत्येक जीव के लिए समान हैं। यह अन्तिम विकास जिसे हम उच्चतम तथा श्रेष्ठतम स्वीकार करते हैं, क्या किसी भी प्रकार दूसरो से भिन्न समझा जा सकता है? विज्ञान ने प्रकृति के अनेक अनजाने क्षेत्रो मे प्रवेश कर ज्ञान को मानव के अधिकार क्षेत्र में

से उत्तम है। नवीन-नवीन वैज्ञानिक शोधों से जैसे-जैसे हम प्रकृति पर अधिक निर्भर होते जा रहे हैं वैसे-वैसे ही भगवान में हमारा विश्वास कम होता जा रहा है। आधा विश्व ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास नही करता है जबकि शेष आधे का भी अच्छा प्रतिशत ईश्वर से अनभिज्ञ है अथवा धर्म के प्रति उदासीन है। अमेरिका में जनमत गणना के आधार पर यह अनुमान किया गया है कि 80 प्रतिशत नवयुवक जो ईसाई मत में विश्वास करते है उन्होने बाइबिल को पढा तक नही है। अन्य धर्मो में भी हो सकता है इस प्रकार का प्रतिशत अधिक न बैठे, फिर भी जो होगा वह कम व्याकुल करने वाला भी नही होगा।

यदि ईश्वर एक वस्तुगत अनुभूति होता और किसी एक रूप तथा किसी स्थान विशेष तक सीमित होता, तब तो इन प्रश्नों का कोई औचित्य भी हो सकता था। इस प्रकार के प्रश्न तो उस सृष्टि-कर्ता के गुणो के नकारात्मक रूप है। गुरु नानक के अनुसार, ईश्वर एक है, पूर्ण सार्वभौम, अनादि, अनन्त तथा इन्द्रियों से परे है फिर भी सद्गुणो और भक्ति के आचरण करने वालो को वह सृष्टि के माध्यम से तथा कृपा भाव से दर्शन देता है। यह ईश्वर जन्म लेकर कभी भी एक रूप में सीमित नही होता है। किन्तु समय-समय पर जीवधारियों को अपने सदेश देकर अपनी ओर आकर्षित करता रहता है।

ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास मात्र अनुमान पर आधारित नही है; यह विश्वास व्यक्ति के उन अनुभवो का परिणाम है, जो विवेक-सगत हैं।

जो मानव सैद्धान्तिक तथा आर्थिक प्रगति के आधार पर मानव प्रसन्नता मे विश्वास करते है, उन्होने भी अपने नवीन ईश्वरों को जन्म देना प्रारम्भ कर दिया है। वे अत्यधिक धर्मान्ध बनते जा रहे हैं और उन विचारधाराओ के निर्माताओ को अचूक मानते हैं। यह आश्चर्य की बात है कि वे अपने ग्रंथो को पूरे विश्वास तथा आस्था के साथ उद्धृत करते हैं और अपने से भिन्न विचारों को सुनने को तैयार नही है। वे अपने ग्रथो को, इन विचारधाराओ के नेताओं

स्वीकार किया है। तकनीकी विज्ञान ने उस ज्ञान का सदुपयोग मानव की सहायता के लिए मशीन तथा यत्रो के निर्माण मे किया है। प्रकृति पर विजय प्राप्त की जा चुकी है और आवश्यक परिणामो को प्राप्त करना मानव के अधीनस्थ है। विज्ञान के ज्ञान तथा तकनीकी विज्ञान के उपयोग से अणु को तोडा जा चुका है और परिणाम अणुबम, हाइड्रोजन बम तथा भयानक प्रक्षेपणास्त्रो के भडार हैं। हवाई यातायात, टेलीफोन, रेडियो तथा दूर-सचार यत्रो के माध्यम से दूरी समाप्त हो चुकी है। ज्ञात विश्व आज एक इकाई के रूप मे हो गया है। हम विश्व सरकार, विश्वशाति तथा विश्वयुद्ध के सम्बन्ध में बहुधा सुनते हैं। हम यह कल्पना नही कर सकते हैं कि शेष भागो को प्रभावित किए बिना किसी एक ही भाग मे युद्ध की अग्नि आज भडक सकती है। अब यह असम्भव है कि 1945 की तरह का विनाश नागासाकी तथा हिरोशिमा तक ही सीमित रहे। यह द्वितीय महायुद्ध की चरम सीमा थी। तृतीय महायुद्ध कभी प्रारम्भ होगा तो मात्र द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति के छोर से नही होगा, अब वह न्यूक्लिरो बमो से प्रारम्भ होगा जो कि 1945 के उस अणुबम से 2500 गुना अधिक विध्वसक माना जाता है जिससे 80,000 मानव मारे गये थे और अनेक असहाय और अपाहिज हो गये थे। इस युद्ध का परिणाम जय पराजय न होकर मानवता का पूर्ण लोप होगा। आज हम इसी सहविनाश की ओर अग्रसर हो रहे हैं। क्या हम इस सम्भावित विपत्ति को टालने के लिए कोई प्रयास कर रहे है?

प्राय सभी राष्ट्र शाति चाहते हैं लेकिन साथ ही उनमें से बड़े राष्ट्र युद्ध की तैयारियो मे रत हैं। इस प्रकार राष्ट्रो मे अधिक विनाशकारी अस्त्रो के निर्माण एव उनके सग्रह की पागलकारी होड़ लगी हुई है।

ये और अनेक इसी प्रकार के प्रश्नों का उत्तर उन मानवो को देना है जो धर्म की शपथ लेते है। यह समय नही है जबकि भिन्न-भिन्न धर्मों के नायक आपस मे प्रतियोगिताएं करें तथा एक दूसरे की आलोचना यह सिद्ध करने के लिए करे कि एक धर्म दूसरे धर्मों

विषय पर कि क्या "ईश्वर ने मनुष्य की रचना की" विचार वैभिन्य है और सदैव रहेगे लेकिन इस तथ्य पर कि "मनुष्य ने ईश्वर की रचना की" एक मत है। रहस्यवादियों, ऋषियों और मुनियों ने उस ईश्वर से समागम के समय, इसलिए, अपने अन्तदर्शन में उसके भिन्न-भिन्न रूपो का साक्षात्कार किया।

गुरु नानक इस पहलू पर यों कहते है :

छे घर छे गुर छे उपदेश, गुर र एको वैस अनेक
बाबाजै घर करते कीरत होये, सो घर राख बड़ाई तोये
विसए चसया छड़ियाँ पहरा, थित्तीवारी माहो होआ
सूरज एको रूत अनेक, नानक करते के केते वेसे

अपने अपने गुरुओं और सुनिश्चित सिद्धान्तो वाले कितने ही दार्शनिक सम्प्रदाय हैं किन्तु सबके प्रकाश का मूल स्रोत एक ही है, भले ही उसके कितने ही रूप हो। कोई भी सम्प्रदाय हो, यदि उसमें कर्त्ता की वदना गायी गई है तो उसका आदर किया जाना चाहिए। सूर्य एक है किन्तु ऋतुयें भिन्न-भिन्न है और काल के आयाम भी भिन्न-भिन्न है, इसी प्रकार ईश्वर एक है, नानक कहते है भले ही उसके कितने ही वेश हो।

इस बात से इन्कार नही किया जा सकता कि धर्म के नाम पर हृदय-विदारक अपराध किये गये हैं। "वहुधा इतिहास मे हमे देखने को मिलता है कि जो धर्म ऊँचा उठाने के लिए, हमे अधिकाधिक नेक बनाने के लिये था उसी ने लोगो को पशुओ की तरह आचरण करने वाला बना दिया है, उनको प्रकाश देने को अपेक्षा बहुधा उसने उन्हे अन्धकार में रखने का प्रयत्न किया है, उनके मन को विशाल बनाने की बजाय उसने जब तब उन्हे सकुचित हृदय और दूसरो के प्रति असहिष्णु बनाया है।"

गुरु गोविन्द सिंह से अधिक बलपूर्वक इस निराशा को कोई और व्यक्त नही कर सका है। अपनी अनोखी शैली मे गुरु कहते है:

"पाप करीह परमारथ कहे जे है, पापन ते अतपाप लजाही"

को, अपने ऊपर आदर और आभासित भक्ति से लादे चलते हैं, इतना ही नही, इस प्रकार की सूचना भी पत्रो मे निकली कि इन अनुयायियों ने यह विश्वास करना प्रारम्भ कर दिया है कि "इन विचारो में रोग दूर करने की योग्यता है तथा जब मनुष्य आपरेशन के समय मेज पर होता है तो इनका मन्त्रवत् पाठ किया जाता है।" यह इस तथ्य का प्रमाण है कि मानव के हृदय मे भगवान के प्रति शाश्वत जिज्ञासा छिपी पडी है, यह जिज्ञासा संतुष्ट नही की जा सकती है और जब तक कि वह अपना वास्तविक स्रोत नही पा जाता, उस समय तक उसे शान्ति नही मिल सकती। यदि मनुष्य उस एक ईश्वर को अस्वीकार कर देता है जिसे दूसरे लोग मानते है, तो उसे अपने सहारे के लिए दूसरे ईश्वर का निर्माण करना पडता है।

जैसा ऊपर कहा गया है यदि ईश्वर परम सत्य है, जिसे केवल अनुभव के आधार पर जाना जा सकता है, तब विभिन्न विचारको, पैगम्बरो तथा रहस्यवादियो के अनुभव विस्तार मे भिन्न होते हुए भी आधारभूत विचार तत्व मे समान ही होने चाहियें। विश्व के धर्मों में विभिन्नता इसी कारण है। मूल उद्देश्य सबका उस परम तत्व को जानना ही है, भले ही उसके मार्ग भिन्न हो।

परपट्टन के शेख ब्रह्म ने गुरु नानक से पूछा—

एका साहब ते दोये हद
केडा सेवी केडा रद्द

विश्व मे एक परम तत्व है लेकिन दो मार्ग हैं, उनमें से कौन-सा स्वीकार करने योग्य है और कौन सा त्याज्य। गुरू नानक को सत्य की अधिक चिन्ता थी, अत. उत्तर दिया—

एको साहिब एका हद्द
एको सेवे ते दूजा रद्द।

विश्व मे एक ईश्वर है, अत उसे पाने का एक ही मार्ग है। उस एक को ही स्वीकार कर, अन्य दूसरो को त्याग। विश्व मे इस

नैतिक व्यवहारो के खलन को धर्म के अस्तित्व को अस्वीकार करने के तुला यन्त्र रूप मे उपयोग नही किया जाना चाहिए। यदि धर्म ने शाति एव सौहार्द स्थापन नही किया है तो ईश्वर के अस्तित्व की अस्वीकृति एवं भौतिक सवृद्धि भी सतोष प्रदान करने या प्रसन्नता लाने में असमर्थ रही है जो कि आर्थिक प्रोग्रामों का आधारभूत उद्देश्य होना चाहिए। इन दिनो हम वृद्धों, युवको, स्त्रियो बीटलो, हिप्पियो एव जिप्पियो को अर्द्ध नग्न, नगे पैरो और मैले घूमते हुए सर्वत्र देखते है। ये एशिया और अफ्रीका जैसे गरीब देशो के नही हैं, और न ये उन तानाशाही देशो के हैं जहाँ रोजगार की सुविधाएँ समुचित हो सकती है, यद्यपि हम यह नही कह सकते है कि वे विपुल मात्रा मे है, वे अधिकाश समृद्ध एवं सम्पन्न देशो के है, जहाँ उनको शारीरिक सुविधाओ की विपुलता रही है और अब भी है। वे भौतिकवाद के प्रति विद्रोह के प्रतीक हैं। वे इस तथ्य के प्रमाण हैं कि मात्र शारीरिक सतोष ने उन्हे अपेक्षित आनद प्रदान नही किया है। युवक महेश योगी अथवा ऐसे ही अन्यो का पीछा कर रहे है जो उन्हे उस शून्यता या रिक्तस्थान को भरने के लिए कुछ दे सके जिसका अनुभव, वे आर्थिक एव शारीरिक आवश्यकताओं से छुटकारा प्राप्त करन पर भी कर रहे है। वे मनस्ताप से पीड़ित है, और अभाव का अनुभव कर रहे है। कोई भी यह जानना चाहेगा कि यह सब क्यो ? इसका मात्र उत्तर यही है कि उनकी कुछ क्षुधा है जिसके परितोष की आवश्यकता है, एक पिपासा है जिसके शात होने की आवश्यकता है, भौतिक सुविधाओ ने उस आवश्यकता का परितोष नही किया है।

तकनीकी मशीनो की चक्की ने मानव को धूलि में मिला दिया है। सम्पन्नता आन्तरिक शाति के अभाव की क्षतिपूर्ति करने में सर्वत्र असमर्थ दिखाई देती है। जैसे-जैसे विश्व अधिकाधिक औद्योगिक हो रहा है और अधिकाधिक व्यक्ति यान्त्रिक रहन-सहन के आदी हो रहे हैं, वैसे-वैसे ही यांन्त्रिक व्यक्तित्व की अभिवृद्धि होगी और विश्व मे कोई ऐसी चीज नही रहेगी जिसकी ओर मनुष्य त्राण की आशा से देख सके।

"मनुष्य धर्म के नाम पर जो पाप करते हैं, वह इतने घृणित होते हैं कि बुरे से बुरे पाप भी उनके सामने लजाते हैं।"

तब क्या हम धर्म से दूर चले जाये ? इस बात से कोई इन्कार नही कर सकता कि मनुष्य के दिमाग मे धर्म का बडा दृढ गढ़ बना हुआ है। इसमे कोई सन्देह नही कि महान् धर्मों के प्रवर्तक संसार के महानतम और श्रेष्ठतम मनुष्यो मे हैं। तब हमे यह सोचना है कि क्या धर्म मे ही कोई कमी है कि ऐसे घृणित अपराध किये गये, अथवा ये अपराध करने वाले स्वय सच्चे धर्मात्मा नही थे, और जिन्होने धर्म का उपयोग उन श्रद्धालु व्यक्तियो को, जिन की अबोधता और अन्धभक्ति से बलिदान चाहा जा सकता था और संकटो का सामना करने के लिए जिन पर निर्भर किया जा सकता था, ऐसे श्रद्धालु लोगो को भडकाने के लिए किया। प्रत्येक धर्म जिसे धर्म का नाम दिया जा सकता है, उसने मानवता के प्रति प्रेम पर बल दिया है। ईसामसीह ने अपने अनुयायियो से कहा "अपने पडोसी से प्रेम करो।"

गुरू नानक ने उपदेश दिया "पिता केवल एक है और हम सभी उसके बालक हैं।"

एक पिता एकस के हम बारक

धर्म, सयम का, जीवन और आत्मशुद्धीकरण का नाम है किन्तु यदि इसके अनुयायी सही मार्ग को छोडकर गलत राहो मे चले जाएं तो यह पतित हो सकता है। यह स्वाभाविक है कि ऐसे पदभ्रष्ट लोग उन अपराधियो तथा उन पापियो के, जो कि धार्मिकता का छद्म धारण किए हुए हैं, उनके अभावों एव दोषो को उभार देगे। ये निंदक धर्म मे आस्था रखने वालो के सुन्दर एवं भव्य स्वरूप को सहज ही भुला देते हैं और धर्म मे आस्था-रहित व्यक्तियो के द्वारा किये गये हृदय-विदारक अपराधो की उपेक्षा करते हैं या उनका नाम लेकर अनुचित लाभ उठाते है। अस्तु बेंजैमिन फ्रेंकलिन (Benjamin Franklin) ने ठीक ही कहा "यदि धर्म मे आस्था रखने वाले ही इतने अत्याचारी हैं, तब वे क्या करेंगे जो धर्म में आस्था ही नही रखते ?"

दिल्ली के सम्राटों ने आंशिक रूप से या न के बराबर उनके कल्याण के सम्बन्ध में सोचा। उनका विश्वास था कि हिन्दू लोगों की रचना मुसलमानों के गुलाम बनने के लिए हुई है और वे उनके घरो को तोड़ कर स्वच्छन्दता से अपनी वासना को संतुष्ट कर सकते है।

कठोर टैक्स लगाये जाते थे, खेती में ठेकेदारों से किसानों को चूसा जाता था जिससे कि वे स्वयं लाभ प्राप्त कर सकें तथा अपने भविष्य के निर्माण के लिए अच्छी रकमें घूस में दे सके। भ्रष्टाचार तथा अशान्ति सर्वत्र व्याप्त थी, देश में डकैतों तथा मानव की नृशस हत्याओं का जोर था, सम्मान तथा पद चाहे जब स्वतंत्रतापूर्वक छीने जा सकते थे। सम्राट विलासी तथा दूषित व्यभिचारिता में डूब चुके थे। राजनैतिक परिस्थितियों के अतिरिक्त सामाजिक पतन हो चुका था जो सर्वत्र व्याप्त था, मानव सारतत्व के स्थान पर प्रतीक में विश्वास करने लगा था। (ट्रम्प)

मुसलमान भी अधिक प्रसन्न नही थे। वे भी अत्यधिक असहिष्णु तथा कट्टर धर्मान्ध हो गए थे और सामान्य जन अपने धर्म के प्रति पूर्णतः अनभिज्ञ था। उनके मुल्ला भी ब्राह्मणो की भाँति न धार्मिक थे न आध्यात्मिक।

मुसलमानों ने भी स्त्रियों को अपनी वासनाओं के लिये खिलौना समझा जो उनके लिये खिलौनो अथवा पशुओ से किसी भी तरह अच्छी नही थीं। उनमें घोर अविश्वास होने के कारण उन्हें धूप और स्वच्छ वायु से दूर अंधेरे कमरों में बन्द रखा जाता था और किसी की देख–रेख में ही बाहर जा सकती थी–वह भी भद्दे काले बुर्के के साथ मनहूस रूप बनाकर।

डा० राधाकृष्णन् ने 1963 मे गुरुनानक पर बोलते हुए कहा, "लोग क्षुद्रताओं का पालन करने में, धर्म के अनुष्ठानों का पालन करने में और निरर्थक पाखंडों को मानकर उनके पालन करने में लग गये थे, जिससे मनुष्य एक दूसरे से अलग हो गये, जिससे वे परस्पर पास आने के बजाय एक दूसरे से अलग होते गये। यह सामाजिक

विज्ञान तारासंकुल विश्व तथा उससे परे के विश्व को भी ज्ञान के क्षेत्र में सम्मिलित कर सकता है, दर्शन ऐसे विश्वजनीन सिद्धान्त के अन्वेषण मे प्रवृत्त हो सकता है जो समग्र वस्तुओ के मूल मे विद्यमान है, किन्तु धर्म अपरिहार्य रूप से मानवीयता पर मनन करता है जो हमारे विवेक को प्रदीप्त करता है, हमारी मेधा को प्रेरणा प्रदान करता है, हमारे प्रेम को स्फूर्ति देता है, हमसे बौद्धिक सेवा की माग करता है।

नानक के पूर्व का भारत

हिन्दुत्व उस समय जिस रूप मे समझा जाता था, सघर्ष व अहिंसा की शिक्षा देता था, और अपने अनुयायियो की दृष्टि भविष्य मे स्वर्ग की प्राप्ति की ओर आकृष्ट करता था, इस पृथ्वी पर प्राप्त जीवन के दुखो के सम्बन्ध में उदासीन हो गया।

उनके लिए धर्म का अर्थ था विशेष प्रकार का खान-पान, स्नान तथा तिलक (जाति चिन्ह) से मुख को चित्रित करना और लाश को सस्कार प्रदान करना मात्र।

ब्राह्मण अपने जीविकोपार्जन के लिये मत्रो को कंठाग्र करते थे, अर्थ की ओर उनका ध्यान नही जाता था तथा नियमानुसार जीवन नही बिताते थे। इस प्रकार मानव अनभिज्ञ तथा उदासीन, और उनके धर्मानुयायी स्वार्थी तथा अनुत्तरदायी हो गये तथा दोनो ही अर्थहीन रीतियो व अ धविश्वासो मे डूब गये। अन्य धर्म सम्प्रदायो ने बाह्य आचारो मे आध्यात्मिकता को गहरे दफना दिया था, हां अनेको को उसमे लाभ भी मिला।

स्त्रियां नीच समझी जाती थी, वे न मोक्ष प्राप्त कर सकती थी और जब तक वे पुरुष योनि मे पुनर्जन्म न ले तब तक स्वर्ग नही जा सकती थी। स्त्रियाँ मानव मनोभावो तथा मानव के आध्यात्मिक जीवन को नष्ट करने वाली समझी जाती थी जिसका प्रथम परिणाम यह था कि वे पूर्णरूपेण त्याज्य थी।

"इस संकुचित घेरे में उन आत्माओं का जन्म होगा जिनके भाग्य मे लाखो को उस नये मार्ग की शिक्षा देना लिखा है जिसके द्वारा वे ईश्वर को टटोल सके। और सम्भव है, यह उनके लिये प्रसन्नता की बात हो यदि वह उन्हे मिल भी जाय। इन्ही में एक आदमी था, हम ये कहने का साहस तो नही कर सकते कि उसे ईश्वर ने भेजा था, इसके ऊपर इतनो अधिक मात्रा में दिव्य प्रकाश पड़ा कि उसे यह वरदान मिला कि मनुष्यो के हृदयों को ढाले, नये विचारों को संवादित करे। वह एक नयी विचार-क्राति के घेरे में खड़ा हुआ था और उसने अपने महत्व को समझा।"

यह लेखक इसके आगे इस वरदानी मानस की व्याख्या करता है—

"उस मनुष्य का नाम नानक था, उसके शब्द नवनीत और मधु थे, शान्ति और प्रेम और पारस्परिक सामंजस्य का उसने प्रचार किया। उसने सिखाया कि मनुष्य एक पिता के ही पुत्र है, और पाखण्ड प्रदर्शन पर वह उपहास की हँसी हँसा, वह ऐसा विनयशील था जैसे आइरोन, वह ज्ञान से इतना भरापूरा था, जितना ऐकले जियासटोस का लेखक था, उसने संसार को अपनी मृदु सीखों के प्रभाव से वश में करने का प्रयत्न किया।"

गुरु नानक का संदेश

गुरु नानक ने अवतारी होकर देखा कि हिन्दुत्व नैतिक सडाध का गिजगिजाता समूह है। उसके सिद्धान्तों में उसने कुछ ऐसे मूढाग्रह पाये जो उस समस्त वस्तु को ही नष्ट कर देते जिन्हे साधन माना गया था। उसने देखा कि जीवत आत्मा सिद्धात-वाक्यों में शुष्क होता जा रहा है, ये सिद्धांत भले ही पारस्परिक व्यवहार के हो, अथवा पुरस्कार या दण्ड के, ये ऐसे रचे गये थे कि अंतरात्मा से कोई भी मांग नहीं कर सकते थे। उसने इन मूढाग्रहों और अंधविश्वासों की जड़ में कुठाराघात किया, यह माग करके कि अपनी आस्था में स्थायित्व लाओ और पूजा में आस्तिकता। मानव और ईश्वर के

अराजकता का युग था, जो सही दिशा में विचार करने वाले मनुष्य के लिए अरुचिकर था।

एक अनाम अंग्रेज ने सितम्बर 1859 के कलकत्ता रिव्यू मे एक लेख 'महान् सिक्ख जाति' शीर्षक से लिखा, जिसमे उल्लेख किया कि गुरुनानक अपने मानस की उच्चशक्ति पर आरूढ हुए और उन्होने अपने देशवासियो की आध्यात्मिक स्थिति पर दृष्टि डाली और देखा कि आधा भाग पाखण्ड, पूजा की पतितावस्था मे डूबा हुआ है; दूसरा अर्द्धांश महान् आध्यात्मिक सत्य से युक्त तो है किन्तु धर्मान्धता और मिथ्या उत्साह से पागल हो रहा है।"

प्रसिद्ध नैयायिक तथा इतिहासकार डा० गोकुल चन्द्र नारंग उस समय के धर्म के सम्बन्ध मे कहते हैं·

"नानक के जन्म के समय लोक धर्म विशेष रूप के खाने पीने, विशेष ढग से स्नान करने और माथे को चित्रित करने तथा ऐसे ही अन्य ऊपरी बातो के करने मे फसा हुआ था—जैसे मूर्ति पूजा........ गगा की यात्रा ...अर्थरहित कर्मकाण्ड, पतनकारी मूढाग्रह, पुरोहित-पुजारियो की स्वार्थान्धता तथा जनता की उदासीनता के सरपत से सच्चे धर्म का स्रोत रुधा हुआ था।

गुरु नानक आये

भारतीय इतिहास के सकट--ग्रस्त समय में गुरु नानक आये। साधु टी० एल० वासवानी ने लिखा 'भारत सशक्त मुगलो के हाथो मे चला आ रहा था तथा हिन्दू और मुसलमान एक दूसरे के घोर विरोधी थे, धर्म पतित होकर पाखण्ड बन गया था और सत्य की आत्मा का गला कठमुल्लावाद ने दबा रखा था।"

यह गम्भीर सास्कृतिक बेचैनी, राजनीतिक उथल-पुथल तथा नैतिक पतन का युग था। 1859 मे कलकत्ता रिव्यू के लेखक ब्रिटन ने चिनाव और सतलज के वीच के क्षेत्र को महान सिक्ख जाति का घर वतलाया और आगे व्याख्या की :—

है। पंजाब में अनेक व्यक्तियों ने अपना धर्म छोड़कर उनके धर्म-उपदेश को ग्रहण किया।

भाई लाल्लो उत्तर में प्रचार कर रहे थे, सज्जन दक्षिण-पश्चिम मे उपदेश दे रहे थे। गोपालदास बनारस मे थे, बुलशहर में झेण्डावेदी, कीरतपुर मे वढ़नशाह व महीवार मे माही थे, पुजारी के पुत्र कलयुग जगन्नाथ में, लुशाई मे देवलूत, बिहार व पटना में साहिबराय, लंका में राजा शिवनाथ, इस प्रकार गुरुनानक के विचार फैलाने वाले अन्य कार्यकर्त्ताओ के दल समस्त प्रदेश में फैल गये। "उनके धर्म प्रचार के केन्द्र जूनागढ, कटक, बेदार, जोहर (शाहतु), नानक माता (कामसान हिल्स) काठमाण्डू, फारस की खाडी, काबुल, जलालाबाद तथा अन्य स्थानो में थे।"

गुरुनानक ने पलायनवाद वृत्ति को अस्वीकार कर दिया। उन्होने कमल का उदाहरण देकर बताया कि वह पानी में रहता है तब भी कीचड़ नही लगतो। उन्होने मानव को ससार में रहने का परामर्श दिया लेकिन उत्तेजना, लोभ, कामुकता, आसक्ति, और अहकार से—जो मनुष्य को पशु बना देते है—इनसे प्रभावित न होने के लिए कहा।

विमल महार बसिस निर्मल जल पदमन जावल रे
पदमन जावल जल रस सगत सग दोख नही रे
दादर तूं कमे न जानस रे भखस सिवाल बसिस
निर्मल जल अमृत ना लख सरे
बस जल कितना बस्त अलीअल भरे चर चरागुर रे

अर्थात् कमल गंदी काई की भाति तालाब के स्वच्छ जल में ही अंकुरित होता है। कमल स्वच्छ जल तथा गदी काई दोनो के साथ रहता है फिर भी वह अपने को दोनो से विलग और ऊपर रखता है। लेकिन ऐ मेढक, तुम इसे नही समझ सकते। तुम उसी तालाब मे रहकर उसमे निहित शुद्ध अमृत का मूल्य जाने बिना, केवल काई ही खा सकते हो। सुन्दर कमल की प्रशसा सुनकर मधुमक्खी

बीच की बाधाओ को उसने साफ कर दिया। नानक ने किसी अवतार को मान्यता प्रदान नही की। उन्होने किसी दैवी सदेश के उतरने की बात नही की। स्वर्ग रूपी न्यायालय मे मानव के पक्ष की किसी मानव के अवतरित होकर मध्यस्थता करने की बात उन्होने पसन्द नही की। उन्होने पवित्रता, न्याय और सत्य के उपदेश दिये। उन्होने परलोक मे भी किसी प्रलोभन की चर्चा नही की, न उन्होने हूरों के कटाक्षो का उल्लेख किया, न कामधेनु या कल्पवृक्ष के प्रलोभन ही दिये। उन्होने स्थापित किया कि इस विश्व मे कष्ट को समाप्त करने से बड़ा सकल्प कोई भी नही है। उनके उत्तराधिकारियों तथा अनुयायियो ने कष्ट सहे, उन्होंने आनन्द का अनुभव किया और स्वय को इस योग्य पाया कि उस महान साहिब के लिए वे कष्ट सह सके। उन्होने स्थापित किया कि एक दूसरे से प्रेम करने के अतिरिक्त कोई भी सत् सकल्प नही है। परलोक के लिए उन्होने कोई प्रलोभन नही रखा—न तो हूरो के कटाक्षो का न कामधेनु या कल्पवृक्ष का। केवल प्रलोभन था स्वय प्रियतम से मिलने का, जीवन का विचार मोक्ष का परिमाण, मानसिक शाति या प्रसन्नता ही नही है, वह है ईश्वर की सेवा करना तथा प्रेम होना; मनुष्य के लिए—भले ही यह घायल पैरो, क्षतरजित भौहो, तथा दुखी हृदयों से युक्त होकर क्यो न हो।

गुरुनानक वास्तव मे धर्म प्रचारक थे। उनका पूर्ण जीवन ही संदेशमय था। उन्होने सम्पूर्ण देश का भ्रमण किया था। इस प्रकार का कार्य विश्व मे धर्म प्रचारको ने कम ही किया है। जब हम भ्रमण से प्राप्त कष्टो के समय की कठोरता, राजनीतिक, सामाजिक एकता और धार्मिक क्षेत्रो पर विचार करते हैं, जो कि उन्होने अपने भ्रमणकाल मे सहन किये, तब हम उनकी उस शक्ति और धैर्य पर आश्चर्य करते हैं, जिनके आधार पर उन्होने अपने समय की अनेक शक्तियो पर विजय प्राप्त की थी।

उन्होने लगभग सम्पूर्ण दक्षिण एशिया का भ्रमण किया था, जहाँ भी गये, वहाँ प्रचारक बनाये जो उनके पश्चात् निर्वाण का संदेश उन मानवो तक पहुँचाते रहे जिन्होने उनको स्वय नही सुन

हम सभी को यह विचार करना है कि हम में से कितने मनुष्य इस पुस्तक के अध्ययन के पश्चात् इससे प्रेम करते है। इस सम्बन्ध में ग्रीनलस कहता है, यह धर्म जिसमें ईश्वर के प्रति अत्यधिक सवेगशील रहस्यात्मक भक्ति के साथ और सामाजिक रीतियों और दैनिक जीवन में वीरोचित आचरण मिला हुआ है तथा जो मूलतः न्याययुक्त तथा विवेक सम्मत है, निश्चय ही सहानुभूति पूर्वक अध्ययन हम विश्व के प्रति तथा गुरु नानक के प्रति प्रतिबद्ध है कि हम लोगों को बताये कि सिक्ख धर्म जीवन मे सयम है और इसमें भ्रातृत्व का आदर्श है जो परमोच्च के प्रति घोर भक्ति से प्रेरित है, और गुरु के अपने जीवन के उदाहरण से जिसे मार्ग निर्देश मिलता है।...

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। धर्मों ने इसी मनुष्य के लिए अपनी आचार-संहिताएं बनायी है, उन्होने बहुधा अच्छे आचरण के लिए पुरस्कारो के वचन दिये है तथा बुरे आचरणो को दड की धमकी दी है। समाज की इकाई होने के नाते प्रशसा से सतुष्ट होता है, तथा निंदा से आहत होता है। इसी प्रकार वरदान युक्त जीवन को आशाएं तथा दरिद्र दुखी अस्तित्व की भयकरता मनुष्य के आचरण और प्रवृत्तियो को प्रभावित करती है।

राज्य शासन स्वामिभक्तो को उनकी सेवाओं के लिए सम्मान और पदवियाँ प्रदान करता है, तथा दोषी को दंड देने के लिए कानून बनाता है।

अर्थशास्त्रीय शक्तियाँ औद्योगिकों तथा पुरुषार्थियों को सुखद जीवन देती है। उधर निकम्मे तथा आलसी व्यक्तियों को निर्धनता तथा अकेलेपन का सामना करना पड़ता है। तब, एक और तीसरी शक्ति भी है जिसे जनमत कहते है। समाज स्तुति और प्रशसा के रूप मे पुरस्कार देता है तथा असहमति और भर्त्सना के द्वारा दड भी देता है। मनुष्य को इस जनमत का आदर करना होता है क्योकि उसे समाज के सदस्य के रूप मे जीना है। किन्तु यह सत्य है कि देश के कानून अधिकाश व्यक्तियों को सीधे मार्ग पर ले जाते हैं, आर्थिक विवशताएं उन्हे सुखी जीवन के लिए कठोर सघर्ष में प्रवृत्त करती है

आती है और कीचड से बिना प्रभावित हुए उसका सम्पूर्ण भोग करती है।

गुरुनानक के धर्म और सिक्ख धर्म के सम्बन्ध मे मैं यहा अपने विचारो के स्थान पर कुछ प्रसिद्ध इतिहासकारो के उद्धरण देना पसन्द करूगा।

आर्नोल्ड टायनबी ने 'सेक्रेड राइटिंग ऑव दी सिक्खस' की भूमिका मे लिखा है—

"मानवता का धार्मिक भविष्य विलक्षण सम्भव है किन्तु एक बात देखी जा सकती है कि जीवित उच्च धर्म एक दूसरे को प्रभावित करते हैं जैसा कि पहले कभी नही हुआ। इन दिनों जब कि विश्व मे आवागमन के साधन बढ रहे है और मानव जाति की सभी तरह से वृद्धि हो रही है, होने वाली धार्मिक प्रतियोगिता में सिक्ख धर्म और उसके धर्मग्रन्थ आदि ग्र थ मे कुछ इस प्रकार के विलक्षण विचार है जो कि शेष विश्व के लिए आवश्यक प्रतीत होते हैं। परम्परागत यह धर्म स्वयं एक सृजनात्मक आध्यात्मिक सव्यवहार का कीर्तिस्तम्भ है।"

क्या इस प्रकार के विचारो से हम इस ढंग से सोचने को बाध्य नही होते कि आज हम विश्व को बतायें कि आने वाली प्रतियोगिता के लिए सिख धर्म क्या सहयोग कर सकता है?

डंकन ग्रीनलैस को एक सिख मित्र ने गुरु ग्र थ साहिब को पढने का परामर्श दिया और तब जानना चाहा कि क्या वह अन्य धर्मों पर लिखी गयी दिव्यवार्ता की भाति सिख धर्म पर भी लिखेगा। अपने अध्ययन के पश्चात उसने गुरु ग्र थ साहिब की दिव्य वार्ता लिखी और जो कुछ अनुभव किया उसने उसका वर्णन इस प्रकार किया है—

गुरु ग्र थ साहिब का अध्ययन और अनुसधान मुझे लाभप्रद कार्य सिद्ध हो चुका है, क्योकि उसके अध्ययन से इस पुस्तक का निश्चित परिचय तथा प्रणाप्रद अवचार और सगीत शैली प्राप्त हुई है। मैं जितना अध्ययन मे रत होता गया उतना ही इससे, प्रगाढ प्रेम होता गया।"

राधाकृष्णन् की इस भर्त्सना से सहमत है कि किंबहुना यह दुर्भाग्यपूर्ण बात है कि सिक्ख गुरुओं ने जिन बधनो को तोड़ डालने का परिश्रम किया था, वे खडे किये जा रहे हैं। ऐसे बहुत से गहिन रिवाज जिनके प्रति उन्होने विद्रोह किया, सिक्ख समाज मे पुनः घुस रहे है। सासारिक हित महान आदर्शों को भ्रष्ट कर रहे हैं। वह धर्म जो मानस में बिना जड पकड़े अथवा हृदय में प्रेम जमाये चेतना की बाहरी पार्श्व मे रहता है नितान्त अपर्याप्त है।

वर्तमान युग मे धर्म को एक खतरा तो बिज्ञान से है, जो लम्बे समय से पनपते विश्वासों और गरिमामय तथा अनुमानतः पवित्र रीति-रिवाजों को ललकार रहा है। धर्म को दूसरा खतरा स्वयं उसके अनुयायियों से है, जिनकी कथनी और करनी में भेद रहता है। धर्म अधिकाधिक कपट और रूढियो से ग्रस्त होता जा रहा है। गुरुनानक का धर्म विज्ञान के धावे से तो पूर्णतः सुरक्षित है। इस पर मैं प्रसिद्ध नोबुल पुरस्कार विजेता प्रसिद्ध अमरीकी रचयिता तथा लेखिका मिस पर्ल. एस. बक का एक उदाहरण दूंगा :

"मैंने अन्य महान धर्मों के ग्रंथो का अध्ययन किया है किन्तु इन ग्रन्थो (गुरुग्रंथ साहिब) के पृष्ठो में हृदय और मन को छूने वाली जैसी शक्ति मिली है, वैसी मुझे अन्यत्र नहीं मिली। लम्बे होने पर भी यह बहुत घनिष्ठ है, तथा मनुष्य हृदय की विशालता का उद्घाटन करते है, और ईश्वर के अत्यन्त पावन भाव से लेकर मानव शरीर की व्यावहारिक आवश्यकताओ की स्वीकृति ही नही वरन् उनके प्रति आग्रह तक के वैविध्यपूर्ण विषय इसमे हैं। इन धर्म ग्रंथो मे कुछ अद्भुत आधुनिकता है और इससे मैं तब तक परेशान रहा जब तक कि मुझे यह विदित नही हुआ कि ये अपेक्षाकृत आधुनिक ही है, क्योंकि इनका सकलन 16 वी शताब्दी मे हुआ था जब कि गवेषणा करने वाले यह आविष्कार करना आरम्भ कर रहे थे कि यह पृथ्वी जिस पर हम सभी रहते है केवल एक इकाई है, जिसे हमने स्वयं स्वकल्पित रेखाओं से विभाजित कर रखा है।

"सम्भवतः एकता का यही भाव इन ग्रन्थों की उस शक्ति का स्रोत है जो मुझे इनमें मिली है। वे किसी भी धर्म के अनुयायियो को

तथा जनमत की चिन्ता उन्हे सही आचरण के लिए प्रेरित करती है। इधर ईश्वर मे विश्वास तथा धर्म में आस्था इस समस्त प्रतिशत जन को धर्म द्वारा निर्देशित आचार सहिता का पालन करने के लिए विवश नही करते। "ऐसे कितने कम व्यक्ति है जो ससार की दृष्टि मे आने पर जैसा आचरण करते हैं, वैसी ही पवित्रता छिप कर किये गये आचरणों मे भी बरतते हैं। सचाई तो यह है कि सामान्यत. मनुष्य जनमत से तो भयाक्रान्त रहता है, किन्तु अन्तरात्मा का भय बहुत कम लोगो को ही रहता है।"

डा० राधाकृष्णन् ने अपने एक भाषण में कहा था—"नानक ने एक ऐसी जाति का निर्माण करने का प्रयत्न किया जिसमें आत्मसम्मान-प्रिय पुरुष और स्त्रियाँ हो, जिनके मन मे ईश्वर तथा अपने नेताओ के प्रति भक्ति हो, तथा जो सबके लिए समानता तथा भ्रातृत्व का भाव रखे। सिक्ख गुरु व्यक्तित्व रूप तथा व्यक्तित्व हीन रूप के विरोधी भाव तथा इन्द्रियातीत और गोचर के विरोध की भूमि का सक्रमण करके इनसे ऊपर उठ गये थे। ईश्वर कोई अमूर्त नही, वह एक वास्तविकता है। जो उसे भक्ति से ध्याता है, वह उसके समक्ष इस सृष्टि मे से तथा कृपा के द्वारा प्रकट होता है। डॉ० मैक्लीओड तक ने, अपने उस शोध प्रवन्ध मे जिसका शीर्षक है 'गुरु नानक का जीवन तथा सिद्धान्त' तथा जिसे उन्होने लन्दन विश्व-विद्यालय मे प्रेषित किया था, लोकप्रिय जन्मसाखियो से मिलने वाली अधिकाश कहानियो को अस्वीकार करते हुए भी "गुरु नानक के दैवी आत्माभिव्यक्ति मे दिये गये योगदान से अत्यधिक प्रभावित हुआ था।" मानते हैं, "जब हम इस बिन्दु से आगे चलकर इस अनुसधान मे प्रवृत्त होते है कि ईश्वर मनुष्य से किस प्रकार सपर्क स्थापित करता है, तभी हमे गुरु नानक के विशेष योगदान का परिचय मिलता है, इसी योगदान से हमे उसकी ठोस मौलिकता का महत्वपूर्ण उदाहरण मिलता है।"

मैं सिक्ख धर्म की किसी अन्य धर्म से तुलना नही कर रहा। गुरुनानक ने हमे यह शिक्षा भी नही दी थी। इस युग मे धर्म की नई व्याख्याओ और नयी पुनश्चयो की आवश्यकता हो गई है। हम डॉ०

आत्म-सम्मान के साथ। सिक्खों मे उन्होनें यही भावना फूंक दी और भारत के उत्तर में सम्मान के पूरे चित्र को ही बदल दिया।

गुरुनानक ने किसी धर्म की आलोचना नही की। उन्होंने कपट का भण्डाफोड़ किया था, कर्मकाण्ड तथा रूढ़िबादिता के पाखण्ड का उपहास किया। इस उदार और सहिष्णु दृष्टि को कुछ लोग ठीक नहीं समझ सके हैं। उन्होने इन्हे केवल सुधारक माना है जिसके पास मौलिक योगदान के लिए कुछ नही होता। फिर कुछ ऐसे भी रचनाकार तथा लेखक है जो भ्रम से यह विश्वास करने लगे हैं कि गुरु ने हिन्दू धर्म और इस्लाम में सामंजस्य स्थापित किया और इसके लिए उन्होने दोनो के नेक पहलुओ पर बल दिया तथा उन्हे ही महत्वपूर्ण माना। "सिक्खों की धार्मिक रचनाओं" शीर्षक पुस्तक के प्राक्कथन में आर्नल्ड टायनबी लिखते हैं—"सिक्ख धर्म को, अब ठीक रूप में नही, इसे हिन्दू-मुस्लिम की समान भूमि का दृश्य माना जा सकता है। ऐतिहासिक हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य की गहराई में गम्भीर सामंजस्य का आविष्कार करना और उसे मानना एक नेक आध्यात्मिक विजय है, और सिक्ख अपने आचरण तत्व तथा उद्भव पर सम्यक् गर्व कर सकते । यह भी गर्व की बात है, कि क्या गुरुनानक का केवल इतना ही योगदान है, अथवा जो धर्म और दर्शन उन्होने दिया उसमें कुछ मौलिकता भी था।

एक अन्य अंग्रेज भी बहुत पहले 1859 मे कलकत्ता रिव्यू में कुछ ऐसे ही अंदाज से लिख चुका था। इस बात की शिकायत करते हुए कि गुरु को उन चमत्कारो के वरदान तथा अन्य दैवी गुणो से अभिमडित करने के प्रयत्न किये जा रहे हैं, जिनमें से किसी का दावा स्वयं गुरु ने नहीं किया। इसी लेखक का कहना है कि गुरुनानक किसी नयी रीति को स्थापित नही करना चाहते थे। उन्होने अपने से पूर्व के सभी गुरुओ को माना है, उन्होने अपने शिष्यो को केवल अपने निजी अनुभवो के फलों का उपदेश दिया। उन्हे धर्माचरण करने की प्रेरणा दी तथा लाभरहित वैराग्य पर व्यावहारिक सद्गुणो को तरजीह दी।

अथवा किसी के भी अनुयायी को समान रूप से उपदेश देते हैं। वे मानव के हृदय से अथवा जिज्ञासु मन से बाते करते हैं।" और इससे आगे उसका वह कथन आता है जो बहुतो को आश्चर्य मे डाल देगा और जो सिक्खो के लिए सही रूप मे गर्व की बात मानी जा सकती है। वह पूछती है :

"कोई यह आश्चार्य कर सकता है कि सिक्ख धर्म के इन सस्थापको को आधुनिक विज्ञान की उपलब्धियों का पता होता तो वे कैसी रचना करते। उनकी ज्ञान की जिज्ञासा उन्हे कहाँ ले जाती, यदि धर्म के स्थान पर विज्ञान उनका साधन होता ?" उत्तर है—"सभवत. उसी दिशा मे क्योकि वैज्ञानिको द्वारा अब जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण उदघाटन हुए है, वे यही हैं कि उनका ज्ञान जैसे-जैसे अनन्त सृष्टि मे स्थित एक के बाद दूसरे, अनेको विश्वो का द्वार खोलता जाता है, यही सिद्ध करता है कि धर्म और विज्ञान मूल-भूत एक हैं। यह प्रभावोत्पादक तथा महत्वपूर्ण बात है कि इन सिक्ख धर्म ग्रन्थो के अध्ययन से इसी बात को पुष्टि होती है क्योकि इसमे उन तेजस्वी मेधाओ तथा अमनुष्यो के हृदयो की गहरी पैठ वाली पहुँच से पुष्टि होती है, जो भारत के ही अ श है। मानव मे से हम उस पर सत्ता को देखते है जो हम सब की है। परिणाम यह हुआ कि सार्व भौम प्रत्यक्षकार हो उठता है।

हमें अपने उत्तराधिकार की चेतना होनी चाहिए और इस दाय पर गर्व होना चाहिए। ऐसे समृद्ध भण्डार के स्वामी होकर हमे इस से दूसरो को भी लाभान्वित करना चाहिए। जितना ही हम इसे बाटेंगे, उतना ही इसका मूल्य बढ़ेगा। गुरुनानक ऐसे समय मे पैदा हुए थे जब धर्म और पाखण्ड या कर्मकाण्ड मे भ्रम पड गया था। पजाब मे गुरुनानक ने दस जीवन धारण करके परिश्रम पर्ण ?क ऐ स जाति का निर्माण किया जो बहादुर थी, आत्माभिमानी थी तथा बलवान भी; और पुरुषो और स्त्रियो को सिखाया कि वे ईश्वर से एक मित्र की तरह, एक सर्वाधिक प्रिय व्यक्ति की तरह किस प्रकार प्रेम करे। जमीन पर दडौती करके नही, वरन् खरे व्यवहार और

द्वारा दौत्य ही माना। उन्होने पवित्रता, न्याय तथा सज्जनता का उपदेश दिया। उन्होंने इस जगत में कोई प्रलोभन भी नही दिये जैसे कि 'हूरो की कृपा-कटाक्ष' अथवा कामधेनु या कल्पवृक्ष के प्रलोभन; केवल स्वय प्रियतम से मिलन की बात कही।

ऐसे धर्म को केवल सुधार नहीं कहा जा सकता। स्पष्टतः यह विचारो और विश्वासो मे एक क्रान्ति थी। डकन ग्रीनलैस ने माना है कि सिक्ख धर्म जीवन का व्यावहारिक मार्ग है, जो मनुष्य को सीधे लक्ष्य तक ले जाता है, और जो सिद्धान्त-निरूपण के शब्द-जाल में नही फंसता।

डा० राधाकृष्णन् के अनुसार "गुरुनानक ने जिसे धर्म समझा था वह इतना सादा तथा भव्य था कि प्रत्येक मनुष्य सच्चा धर्मात्मा हो सकता है। धर्म जिया हुआ जीवन है।"

जब कभी गुरुनानक को हिन्दू धर्म, इस्लाम या इसाई मत में उन्हे पसद आने वाले सिद्धान्त मिले तो उन्हे ग्रहण कर लेने में उन्हे तनिक भी संकोच नही हुआ। किन्तु यदि उनका मतभेद हुआ तो उस बात को उन्होने पूरी तरह अस्वीकार कर दिया। उन्होंने मनुष्य की प्रवृत्ति पर अ धा भरोसा नही किया। सारंग राग के अपने एक छद मे वे कहते है :

अकली साहिब सइये अकली पाहिये मान।
अकली पढ के बूझिये, अकली कीयै दान।
नाक आखे रहा ए होर गला शैतान।
मारली माग्यि मेहीगै झरली पाशोझै भार।
झरली यहु रे यही झैभार।
रारर भाबे ताउ सिउ गैत गला मैंडार।

हमको ईश्वर को अक्ल से जानना चाहिए। यह उसी समय सम्भव है जबकि हम बौद्धिक अक्ल से व्यवहार करें और तभी हमें अन्य लोगों का सम्मान प्राप्त हो सकता है। हमें अध्ययन भी अक्ल से करना है, तभी हम जो पढ़ते हैं उसे समझ सकते हैं। दान देते समय भी हमें अपने विवेक से काम लेना चाहिए।

डा० त्रिलोचनसिंह अपने ग्रन्थ, "गुरुनानक धर्म : धर्मों का तुलनात्मक अध्ययन" में इस विषय मे पूरे बल से तथा स्पष्टतापूर्वक लिखते हैं

"यह गुरुनानक का व्यक्तित्व ही था जिसने नवीन धार्मिक अनुभवों तथा विचारो के सवर्द्धन के लिए प्रेरणा प्रदान की और इन्ही के आधार पर एक सुग्रथित तथा व्यवस्थित धर्म की नीव पड़ी।

"हिन्दू धर्म जो एक सनातन धर्म था, उसके विपरीत, सिक्ख धर्म को उसके प्रवर्तक गुरुनानक ने एक विशेष व्यवस्थित रूप धर्म द्वारा प्रदान किया, जो सगत कहलाता है या गुरुद्वारा कहलाता है। उनके धर्म के सिद्धान्त झूठे पैगम्बरो की कच्चीवाना' के विरुद्ध सच्ची बानो अथवा सत्य के शब्द कहे जाते हैं। बिना किसी पुरोहित प्रणाली का विधान किये, उन्होने अपनी निजो पूजा-उपासना पद्धति स्थापित की, शिष्यो को दीक्षित करने की अपनी दीक्षा पद्धति चलाई, अपने निजी धार्मिक नियम तथा निजी आचरण सहिता स्थापित की जो आज तक परम्परा और आचरण द्वारा सुरक्षित चली आयी है। उन्होने अपने धर्म को सभी बोझिल विधि-विधान, निरर्थक कर्मकाण्ड, तथा अर्थहीन उपचारो से मुक्त रखा ताकि उसके आवश्यक आदर्श तथा आचार मनुष्य के शुद्ध धर्म के निकट रहे।"

तेजासिंह भी अपने ग्रन्थ 'गुरुनानक तथा उनके सदेश (मिशन)' मे ऐसे ही लक्ष्यवेधी हैं, जबकि कुछ वाक्यो में ही गागर मे सागर की भाँति बहुत कुछ भर दिया है। वे कहते है

"गुरुनानक ने देखी नैतिक सडायध, कुछ विशेष मूढाग्रह, जीवन्त आत्मा कुछ सूत्रो मे सूखी पडी है। इस मूढाग्रह की जड़ पर उन्होने कुठाराघात किया यह मार्ग प्रस्तुत करके कि आस्था मे सच्चाई रखो और पूजा उपासना मे प्राण-प्रतिष्ठा करो।"

उन्होने ईश्वर और मनुष्यो के सबधो के बीच किसी मध्यस्थ को मान्यता नही दी, कोई अवतार उन्होने स्वीकार नही किया, न किसी प्रत्यक्ष दर्शन को माना और स्वर्ग मे मनुष्य की ओर से मनुष्य

विश्व तभी अस्तित्व मे आया जब उसने वैसी इच्छा की। ईश्वर से सत्य रूप में आरम्भ होकर सृष्टि की प्रक्रिया का उल्लेख यों हुआ है :

साचे ते पावना भया पवने ते जल होई
जल ते त्रिभवन साजया घट जोत समोई
मूल सत्य से पवन हुआ
पवन से निकला जल
जल से समस्त विश्व बना
और सृष्टि मे समा गया।

किन्तु कुछ सन्देहालु पूछते है कि ईश्वर की रचना किसने की ? किन्तु एक आदि कारण भी तो मानना ही होगा। यदि ईश्वर की रचना की गई तो हम अनुमान करते है कि कोई और कर्त्ता होगा। गुरुनानक कहते है "वह स्वयं भू है, वह शुद्ध आत्मा (परमात्मा) है, जिससे अन्य उद्भूत हैं। वह आदि से है, और सदा ऐसा ही रहेगा।"

अपने एकेश्वरवाद में सिक्ख मत इस्लाम के समान है, किन्तु इस्लाम में ईश्वर व्यक्तित्वधारी है। मुसलमान विश्वास करते है कि मुहम्मद उसके पैगम्बर हैं। गुरुनानक ने यह पैगम्बरत्व का सिद्धान्त त्याज्य माना है। उनके अनुसार ईश्वर अवतार अथवा पैगम्बर के रूप मे कभी नही आता।

सिक्ख धर्म का ईश्वर एक है और उसके समकक्ष कोई दूसरा नहीं, न कोई उसका प्रतिनिधित्व ही करता है। जोराष्ट्रियन धर्म मे ईश्वर दो भागो मे बटा हुआ है। अहुरमज्द तथा अहिरमान। ईसा ने अपने को ईश्वर का पुत्र घोषित किया, किन्तु ये विचार आदि ग्रन्थ मे ग्राह्य नही हैं।

'सभी वेदान्त सम्प्रदाय ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास करते हैं। ईश्वर सर्वशक्तिमान तथा सर्वद्रष्टा है। शंकर के मतानुसार उसे दो दृष्टिकोणो से देखा जा सकता है अर्थात् क्षणभंगुर तथा निर्गुण

जब हम विश्व के धर्म के विविध भावबोधों के आधारभूत विचारो की चर्चा करते हैं, जैसे ईश्वर का विचार, धर्म का अर्थ, कर्म और पुनर्जन्म तथा अवतार, तो हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि गुरुनानक अपने से पूर्व के सभी सतो तथा पैगम्बरो का आदर करते हुए भी धर्म को एक नया आयाम देते हैं, जिसमे सत्य समस्त आचरण पर छाया रहता है। सभी धर्मों मे सत्य का प्रमुख स्थान है तथा महात्मा गाधी ने सभी सद्गुणो का निचोड अपने इस कथन में भर दिया है कि सत्य ही ईश्वर है, किन्तु कोई भी गुरुनानक के इस कथन की बराबरी नही कर सकता :

सच्चों उरे सबको ऊपर सच आचार

सत्य अन्य सभी वस्तुओं से उच्चतर है किन्तु इससे उच्चतर है सच्चा आचारमय जीवन।

हिन्दू धर्म तथा इस्लाम चौदह लोको की बात कहते हैं—सात ऊपर आकाश मे और सात पाताल मे। गुरु नानक लोको को गिनती में नही बाधते। उनके अनुसार 'पाताला परताल लख आगासां, आगास।' पाताल और आकाश मे लाखो लोक है।

सृष्टि रचना के पूर्व स्थिति के मूल के सम्बन्ध मे गुरुनानक का विश्वास था कि आरभ में केवल ईश्वर था और सब कुछ अधकार से पूर्ण था।

अरबद नरबद धर्मकारा
भरन गगन हुकम अपणा।
ना दिन ना रैन
ना चाँद ना सूरज
सुन समाद लगायंदा।

अनन्त समय भी अंधकार था, न पृथ्वी थी, न आकाश, न दिन था न रात, न चन्द्र था न सूर्य, ईश्वर था वह समाधिमय था।

मूल तत्वों–काल, देश, आत्मा व पदार्थ–के मेल से सृष्टि बनी। बुद्ध किसी भी ऐसी तात्विक व्याख्या के विरुद्ध थे। सांख्य दर्शन दो प्रकार की अनादि सत्ता को मानता है—अर्थात् प्रकृति और पुरुष को। योग दर्शन कहता है कि प्रकृति और पुरुष का संयोग आधि तथा ईश्वर के द्वारा कराया जाता है। न्याय वैशेषिक दर्शन के अनुसार सृष्टि का सर्जन ईश्वर ने शाश्वत अणुओं से किया। पूर्व मीमांसा भी मानती है कि काम के नियमाधीन कार्यरत अणु सृष्टि बनाते हैं। शंकर के मतानुसार सृष्टि रचना ईश्वर ने अपनी शक्ति माया की सहायता से की है। रामानुज मानते हैं कि ईश्वर ने अपने अन्दर स्थित माया और निष्क्रम पडी आत्माओं से सृष्टि बनायी। माध्व कहते हैं कि ईश्वर ने सृष्टि उस प्रकृति से ली है जिसमें विषम तत्व सूक्ष्म रूप में उपस्थित थे।

किन्तु आदि ग्रन्थ के अनुसार ईश्वर ही अकेला अनादि सत्ता है, उसी ने प्रकृति और पुरुष की रचना की है। वही तीन गुणों का उद्भावक है—अर्थात् रजस, तमस तथा सत्वका। यह पुरुष जो अन्य पुरुषों (जीवो) से भिन्न है। (कोहली: ए क्रिटिक्स स्टडी ऑव आदि ग्रंथ।)

सार्वभौतिक सम्बन्धों तथा सार्वभौम विचार वाला यह नया युग जिस किसी भी धार्मिक विश्वास से मिलता है उसे बड़ी दूर खींचतान और परीक्षा में डालता है। वे रीति-रिवाज और नियम जो शताब्दियों से जन मानस को सतोष देते रहे थे, अब दरक रहे हैं, कुचले जा रहे हैं और टुकड़े-टुकड़े होकर गिर रहे हैं जैसे झंझा में फंसे पुराने जहाज के डांड टूट टूट कर गिर जाते हैं, अकेले सिक्ख धर्म ने ही जैसे तूफान को झेल लिया है।

किन्तु अभी तक विचारों में स्थितप्रज्ञता, स्थितप्रसन्नता नहीं आ पायी, जिससे शिक्षितों में सदेहशीलता की लहर इस क्षण उठी हुई है। अपने धर्म के लिए उनमें कोई विशेष श्रद्धा नही है और वे अपने दिन एक मृदुल उदासीनता में बिता देना अच्छा समझते हैं। इससे उनमें कोई उत्साह नही जागता। इससे उन्हे किसी कार्य में

(इन्द्रियातीत)। पहले दृष्टिकोण से वह सगुण है और दूसरे से निर्गुण। आदिग्रन्थ मे ये दोनो पक्ष स्वीकार किये गए हैं। ईश्वर ने प्रलय स्थिति मे से एक शब्द मात्र के उच्चारण से ससार रच दिया–

"कीता पसाओ एको कवाओ"

यह इस इस्लामी विचार के ही तुल्य है—

"कुन कहने से किया आलम बपा"

किन्तु आदिग्रन्थ सर्वसिद्धान्त इस्लाम से भिन्न है—

तिस भावे ता रचे विस्थार।
तिस भावे तो एक अ कार ॥

जब ईश्वर चाहता है, सृष्टि रच देता है और उसका विस्तार करता है,

और जब कभी वह चाहता है, वह पुन पुन एक हो जाता है।

ईश्वर का पितृत्व तथा मनुष्य के भ्रातृत्व विषयक इस्लाम के विश्वास को आदिग्रन्थ मे भी माना गया है किन्तु आदिग्रन्थ के अनुसार ईश्वर केवल पिता ही नही वह मा, भाई, पति और मित्र भी है।

सर्वजनीन ईश्वर, सर्वजनीन पैगम्बर, प्रार्थना (नमाज़) उपवास (रोजा) तीर्थाटन, जुकात तथा दान-पुण्य के महत्वपूर्ण सिद्धान्तो मे ही इस्लाम का विश्वास है। जैसा ऊपर बताया जा चुका है कि आदिग्रन्थ ने सार्वजनिक ईश्वर को तो माना है, सर्वजनीन पैगम्बर को अस्वीकार किया है। प्रार्थना की प्रणाली मे अर्थात् सामूहिक प्रार्थना की प्रणाली में बहुत -साम्य है। आदि ग्रन्थ मे सद्सगति का बहुत महत्व है। उपवास तथा तीर्थाटन धर्माचरण हैं और ये वैसे ही स्वीकार नही किये गये हैं जैसे कि हिन्दू धर्म आचरणो मे। गरीबो तथा अभावग्रस्त को दान देने का प्रोत्साहन दिया गया है।

चार्वाको का मत है कि माया के तत्वो से बिना किसी बाहरी कर्ता के ससार का स्वयं भूजन्म हुआ है। जैनियो के अनुसार चार

आचरण करना कठिन नहीं। गुरुनानक ने पाखंड की भर्त्सना की, छल छन्द का भण्डा फोड़ किया तथा रुढिवादिता का विरोध किया। इनके अनुसार किसी पुरोहित की आवश्यकता नहीं, न अभीष्ट प्राप्ति के लिए किसी की मध्यस्थता अपेक्षित है। पुण्यकृत्यों से व्यक्तिगत उपलब्धि, सत्य व्यवहार तथा मानवता की सेवा ही सर्वाधिक उपयोगी है। किन्तु, ईश्वर मूर्तिमान करुणा है। अतः उसकी दया की याचना भी अपेक्षित है। स्त्री उतनी ही अच्छी है जितना कि पुरुष। दोनो ही अपने अपने पुण्य कृत्यों से स्वतंत्र रूप से अपने लिए मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं। मृत्यु के बाद, मानवता की सेवा ही से मान्यता तथा यश मिलेगा। गुरु नानक नीच से नीच और दलितो के मित्र थे। ईमानदारी से श्रमपूर्वक अर्जन करो और इस अर्जन में अभावग्रस्तो को भी हिस्सा दो, यह उनका समाजवाद था।

मानव शरीर ईश्वर का भव्य मन्दिर है, इसमें उसने अनन्त प्रकाश भर दिया है। गुरु नानक ने यद्यपि कर्ता से कोई रक्त सम्बन्ध नही जोडा तथा सदा अपने आपको एक चूक भरा मनुष्य कहा, तथापि प्रतिपल उनकी यही आकाक्षा थी कि वे ईश्वर से ऐक्य स्थापित कर सके और उसे बनाये रह सके जैसे स्त्री अपने सौन्दर्य से तथा नेकी, सतीत्व, श्रद्धा तथा भक्ति से गुण मडित होकर अपने पति का सायुज्य प्राप्त किये रहती है।

गुरु नानक अन्याय अथवा अत्याचार को सह नहीं सकते थे। उन्होने अन्य लोगों के साथ जेल भुगती तथा कठिन श्रम किया। जब बाबर ने भयानक अत्याचार किया तब उन्होने ईश्वर को भी उसकी उदासीनता के लिए चुनौती दी।

गुरु नानक ने सती की कुप्रथा, अस्पृश्यता तथा अन्य सामाजिक बुराइयो की भर्त्सना की।

गुरु नानक का संदेश उतना बुद्धि के लिये नही जितना की हृदय के लिये अधिक ग्राह्य है।

गुरु नानक ने श्रम के महत्व का प्रतिपादन किया। एक गडरिया, श्रमिक, दुकानदार, व्यापारी व राजकीय कर्मचारी की भांति उन्होनें

प्रवृत्त होने की प्रेरणा नही मिलती। वे यह नही जानते कि यह उन्मुक्तता धार्मिकता के सामान्य सिद्धान्तो को भी ढीला कर देती है। यह उन आधारो को ही नष्ट कर देती है जिन पर कि धर्म-व्यवस्था ठहरती है। यह अपने पक्ष समर्थन मे बहुत सी बाते कह सकते हैं किन्तु इसका प्रत्यक्ष परिणाम आज के जगत मे यही है कि शिक्षित तो सदेहशील तथा नास्तिक बनते जा रहे हैं और शेष सुखद; किन्तु पतनकारी मूढाग्रहो के वशीभूत होने के लिए रह जाते है। यहाँ यह निषेध, जिसे वे उदारतावाद कहते है, आरम्भ मे तो अच्छा संशोधक होता है, किन्तु यह स्थायी हल के रूप मे उपयोगी नही। इसे एक सुनिबद्ध रूप देना होगा, जिससे अपने ही घर मे वह स्थित हो सके।

गुरु नानक यथार्थ मानववादी थे। उन्होने ईश्वर से कोई तज्जात रिश्ता नही माना। उन्होने इस विचार को नही माना कि कर्त्ता स्वय एक स्त्री की कोख से पैदा होता है, या पैगम्बर बन कर आता है, या अवतार बनकर। वह ईश्वर के पितृत्व मे विश्वास करते थे, समस्त मानवो की समानता मे विश्वास करते थे, जाति तथा जन्मजात स्थिति को वे नही मानते थे।

उनका ईश्वर प्रत्यक्ष (सगुण) भी था और दृश्यातीत (निर्गुण) भी। ईश्वर आरम्भ मे था, शेष सब कुछ अंधकार था। उसने पवन निर्मित किया, तब जल की और तब जगत की सृष्टि की।

ईश्वर अपने से सृष्टि मे समा गया। हमे जो सहारा दिखाई पडता है वह उसी की अभिव्यक्ति है। वह यह सब कुछ है और इससे भी अधिक है।

गुरु नानक ने धर्म मे धर्मनिरपेक्ष सर्वजनीन सदेश बिना किसी पैगम्बर का खण्डन किये दिया। सभी भाव मूल सत्ता मे जा मिलते है किन्तु गुरु नानक ने अपना निजी स्पष्ट तथा सुनिश्चित मार्ग निर्धारित किया जिसे सरलता से समझा जा सकता है और जिस पर

गुरु नानक की ईश्वर सम्बन्धी आस्था | 2

—सरदार गुरनामसिंह

गुरु नानक का मत था कि जीवन का परम लक्ष्य सत्य की खोज है। इस खोज का स्वरूप केवल सैद्धान्तिक अथवा काल्पनिक नही है, वरन् व्यावहारिक है। इसका मनुष्य की मुक्ति से घनिष्ठ सबध है। मनुष्य की देह रूपी प्रयोगशाला मे सत्य की खोज का प्रयोग निरतर होता रहता है। नानक ने उच्छृखल और अमर्यादित जीवन की निदा की है। उनका कहना है कि मनुष्य जीवन का उपयोग सत्य को खोज में किया जाना चाहिए।

उन्होने कहा है :

'सच्चों उरे सबको ऊपर सच आचार'

सबसे ऊपर सत्य है किन्तु सत्य पर आचरण कहना उससे भी ऊपर है।

कार्य किया, अन्त मे वे एक कृषक की भाति गांव में बस गये। उन्होने तपस्या या एकान्त साधना को अनुचित कहा। उन्होने विवाहित जीवन के लिए परामर्श दिया तथा पति एव पिता होने का उदाहरण प्रस्तुत किया।

लेकिन जब मानवीयता (जिसे वह अपना कुटम्ब ही समझते थे) की सेवा के लिये उनको उच्चतर उत्तरदायित्व के लिए कर्त्तव्य ने पुकारा तो उन्होने सकीर्णता के बन्धनो से मुक्ति पाई तथा दुखी व बीमार मस्तिष्को की तथा पीड़ित आत्माओ की आध्यात्मिक चिकित्सा करने के लिये वे चल पड़े।

आज मानवता को एक अध्यात्म की आवश्यकता है जो कर्मकाड तथा पाखड की शृंखला से मुक्त हो तथा उस प्रेम, सत्य तथा सेवा पर आधारित हो, जो किसी सकीर्ण विचार एव किसी के प्रति घृणा और तिरस्कार से पूर्णत मुक्त हो। यही गुरु नानक हैं कि जिन्होने यह अध्यात्म प्रदान किया है और जो प्रेम तथा सत्य के पावन सन्देश को आज से 500 वर्ष पूर्व छोड गये थे। आज वैज्ञानिक युग के विचारकों तथा शोध विद्वानो द्वारा उनके धर्म के अध्ययन की बहुत आवश्यकता है।

नानक ने कहा था ।

भगवान दूर नही है, वे तो भक्तो के हृदय में निवास करते है ।

इस प्रकार उन्होने एकेश्वरवाद की शिक्षा दी और भक्तो को भगवान के सम्मुख ला खडा किया । उन्होने कहा है ·

केवल ईश्वर ही अमर है ।
शेष सभी मृत्यु को प्राप्त होंगे ।

उन्होंने यह शिक्षा भी दी कि भक्त और भगवान के बीच घनिष्ठ और व्यक्तिगत सम्बन्ध है ।

गुरु नानक का ईश्वरवाद पश्चिम के सर्वेश्वरवाद से सर्वथा भिन्न है । गुरु नानक के मतानुसार मनुष्य स्वयभू नही है, लेकिन ईश्वर स्वयंभू है । यह सृष्टि पूरी तरह से ईश्वर पर निर्भर करती है । ईश्वर की इच्छा के बिना यहा कुछ नही हो सकता ।

गुरु नानक ने ईश्वर भक्ति के गीत रचे और गाए । उनकी रचनाओ में उनके हृदय का स्वर है । उन्होने एकता, पिता स्वरूप ईश्वर, भाईचारे और प्रेम का सदेश दिया । उन्होने कहा कि ईश्वर प्रेम से स्वतन्त्रता, निर्भयता और परोपकारिता के भाव पुष्ट होते है । उन्होने जाति-पाति, धर्म और लिंग आदि का भेदभाव किए बिना सभी से भक्ति मार्ग पर चलने का अनुरोध किया । उन्होने अन्तमुखी और आध्यात्मिक दृष्टिकोण अपनाने और शरीर को सेवा का साधन बनाने का परामर्श दिया । उन्होने अपने अनुयायियों को शक्ति सचय करने और धर्म के मार्ग पर चलने की सलाह दो ।

इस परिवर्तनशील ससार में उन्हे ईश्वर नाम ही स्थायी लगा । उन्होने कहा कि भगवान की इच्छा का अनुसरण करके ही सत्य की खोज का लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है । भगवान की इच्छा सर्वोपरि है । जो इस सत्य को स्वीकार कर लेता है और ईश्वरेच्छा का अनुसरण करने लगता है, वह बुराई और अहकार के जाल मे

सत्य की खोज से ही मर्यादित जीवन की प्राप्ति होती है। सत्य के मार्ग पर चलने वाला व्यक्ति ही सच्चा शिष्य अथवा मित्र है। केवल वही अपने जीवन का सदुपयोग करता है, जबकि शेष व्यक्ति केवल जिन्दा रहते हैं और इधर-उधर भटकते रहते हैं। मोक्ष की प्राप्ति के लिए शिष्य गुरु की शरण जाता है और धर्म पर आचरण करने वालो की सगत करता है।

सत्य का, जिसकी प्राप्ति के लिए निरंतर प्रयत्न किया जाता रहा है, स्वरूप क्या है ? भारतीय दर्शन ग्रथो मे इस प्रश्न को समझने और इसका उत्तर देने का प्रयत्न किया गया है। उपनिषदो मे ब्रह्म और आत्मा की चर्चा कही तो वैयक्तिक और कही अवैयक्तिक तरीके से की गई है। वेदात दर्शन में बाद के व्याख्याकारो ने ब्रह्म की कल्पना कभी सगुण कभी निर्गुण रूप मे की है। उदाहरण के रूप मे शकर मे निर्गुण ब्रह्म की और रामानुज ने सगुण ब्रह्म की व्याख्या की है। लभगग एक सहस्र वर्ष बाद आज भी शकर और रामानुज के अनुयायी विचारो की दृष्टि से एक दूसरे से काफी दूर हैं। ईश्वर की सत्ता के सम्बन्ध मे हिन्दू दार्शनिको के दृष्टिकोण का विरोधाभास आज भी बना हुआ है।

गुरु नानक सत्य और ईश्वर को समान समझते थे और सिक्ख परम्परा को उन्होने इस प्रकार के विवादो से मुक्त रखा। उन्होने जपुजी के प्रारभ मे मूल मत्र मे ईश्वर के स्वरूप को इस प्रकार स्पष्ट किया है :

एक ओकार सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैर
अकाल मूरति अजुनी सैभ गुर प्रसादि।

वह एक है, ओकारस्वरूपहै, वह सत्य नाम वाला है, करतार है आदि पुरुष है, भय रहित और वैर से रहित है,वह तीनो कालों से रहित स्वरूप वाला है। वह अयोनि और स्वयभू है और गुरु की कृपा से प्राप्त होना है।

गुरु नानक का धर्म एवं दर्शन | 3

—(डा०) भाई जोधसिंह

राजस्थान विश्वविद्यालय ने 'गुरु नानक का धर्म एव दर्शन' पर बोलने का मुझे अवसर दिया, इसके लिए मै आभारी हू । इस विषय पर कुछ कहने के पूर्व मै सोचता हू कि 'दर्शन' व 'धर्म' की परिभाषा समझ लेना आवश्यक है । 'हिस्ट्री आव फिलासफी : ईस्टर्न एण्ड वेस्टर्न' की भूमिका मे तत्कालीन केन्द्रीय शिक्षा मन्त्री स्व० मौलाना अबुल कलाम आजाद ने 'दर्शन' की परिभाषा इस प्रकार की है :

'एक फारसी कवि ने संसार की तुलना एक ऐसी पुरानी पुस्तक से की है जिसके प्रथम व अन्तिम पृष्ठ गायब हो जाने से उस पुस्तक के प्रारम्भ होने तथा अन्त होने के समय का पता चलना सम्भव नही है ।

नही फंसता। नानक ने नम्रता और प्रेम के साथ ईश्वर का संदेश फैलाया। उन्होने अहंकार और स्वार्थपरता की निन्दा की ।

भगवान का नाम लेकर ही हम भवसागर को पार कर सकते हैं। केवल ईश्वर का नाम ही हमारे हृदयों को शुद्ध करने और मुक्ति का द्वार खोलने मे समर्थ है। यही कारण है कि गुरु नानक ने सुमिरन और सेवा पर जोर दिया। हरि नाम सुनने मात्र से मनुष्य के मन का समस्त कलुष धुल जाता है।

नानक ने कहा है

भगवान का नाम सुन कर जब हृदयतन्त्री के तार झनझना उठते हैं तो निर्वाण का द्वार खुल जाता है।

●

परिचायक है। वह हमें ईश्वरीय सत्ता की वास्तविकता का तथा उसके यथार्थ ज्ञान का बोध कराता है। ईश्वरीय ज्ञान जिज्ञासु के अन्त करण में प्रविष्ट होता है किन्तु वह दिन के प्रकाश की तरह बाह्य जगत् से नही प्रवेश करता है। वह दीवाल जो जिज्ञासु को ईश्वरीय सत्ता से विमुख करती है, टूट जाती है। जिज्ञासु की यह अभिलाषा होती है कि वह इस अन्त.करण के ईश्वरीय बोध में पूर्ण रूप से साकार हो जावे।"

इस प्रकार दर्शन मानवीय तर्कों के आधार पर प्रतिपादित निष्कर्षों पर आश्रित है जबकि धर्म का आधार मानव के अंतः करण का बोध है जो यथासम्भव मानवीय वाणी में संसार पर प्रगट किया जाता है।

भारत में धर्म और दर्शन की गति साथ-साथ रही है। दर्शन के सभी छः मीमासकों ने ईश्वरीय सत्ता, ससार के प्रादुर्भाव, आत्मा के स्वरूप, इसके उद्धार और उसको प्राप्त करने के साधनों का विश्लेषण किया है। वेदो और उपनिषदो मे लिखित ऋषियों के अन्तः करण के बोध इसके अधिकृत प्रमाण माने जाते हैं।

उपर्युक्त परिभाषा के आधार पर गुरु नानक दार्शनिक नही थे। वे विशेषतया एक धार्मिक पुरुष थे और उन्होने अपने आत्मानुभव हमको अपनी सम्पूर्ण स्पष्टता से बतलाए। आत्मानुभव की प्राप्ति अध्ययन, बौद्धिक शक्ति या श्रवण से नहीं की जा सकती। धर्म केवल बौद्धिक साधना या नयाचारिक विधियाँ ही नहीं है। यह आध्यात्मिक गवेषणा है। यह तर्क की वस्तु नही, अनुभव का प्रतिफल है।

गुरु नानक ने यह अनुभव सुलतानपुर में किया जहाँ वे दौलतखाँ लौदी के भडारी के रूप में कार्य कर रहे थे। प्रातः काल जल्दी ही वे बेननदी मे स्नान करने जाया करते थे और सूर्योदय तक उसके किनारे ध्यान लगाया करते थे। एक दिन ऐसा हुआ कि नित्य की तरह वह स्नान-ध्यान के लिए गए किन्तु समय पर वापिस

'जब से मनुष्य मे समझ आई, वह इन गुम पृष्ठों को ढूँढ़ने का प्रयत्न करता आ रहा है। इसी खोज एव उसके प्रतिफलो का नाम 'दर्शन' है। एक दार्शनिक 'दर्शन' और उसके तत्वों का वर्णन करने मे कई पुस्तकें भर देता है, किन्तु कवि ने दो पक्तियो मे उसका वर्णन कर दिया है।

'इस खोज का उद्देश्य जीव और उसके अस्तित्व का अर्थ ज्ञात करना है। ज्यो ही मनुष्य ने समझ पाई और सोचना प्रारम्भ किया, उसके मस्तिष्क मे दो प्रश्न पैदा हुए : इस जीवन का अर्थ क्या है और उसके चतुर्दिक् जो ससार दृश्यमान है उसका स्वभाव क्या है ? हमे ज्ञात नही कि कितने समय तक मानव अंधकार मे भटकता रहा किन्तु एक समय आया जब उसने निश्चित दिशा ली और तर्क एव विचार के पथ पर उसने बढना आरम्भ किया। व्यवस्थित तर्क का आरम्भ यही से होता है, और जिस दिन मानव बुद्धि इस सीमा तक पहुँची, उसी समय 'दर्शन' का प्रादुर्भाव हुआ।'

धर्म की परिभाषा के लिए मैं डा० सर्वपल्ली राधाकृष्णन का उद्धरण प्रस्तुत करना चाहता हूँ। अपनी पुस्तक 'रिलीजन एण्ड साकल्चर' के २२वें पृष्ठ पर वे लिखते हैं, "धर्म की समस्या मानव की अपूर्ण स्थिति से उत्पन्न होती है। जीवन मात्र भौतिक या प्राणी-शास्त्रीय प्रक्रिया ही नहीं है। इस शरीर की मृत्यु से तथा संसार के दु खों व खतरो से कौन बचायेगा, यह प्रश्न सामने आता है। रक्षा की आवश्यकता से ही उन परिस्थितियो एवं संभावनाओ का पता चलता है जिनमें हम रक्षा ढूँढते हैं।... यह आत्मा के स्वरूप का वह ज्ञान है, ईश्वर का अन्त करण मे बोध है जब मानव पूर्ण स्वतत्रता प्राप्त करता है और साधारण अनुभव के अन्धानुकरण से बचता है। यह आध्यात्मिक जगत् से पवित्र गठबंधन है, यह सासारिक विचारों का तर्क या आकड़ो के विश्लेषण द्वारा जानकारी प्राप्त करना नही है।"

पृष्ठ २३ पर वे आगे लिखते हैं, "अन्त करणीय बोध हृदय में उत्पन्न कोई प्रबल इच्छा नही है, अपितु किसी ज्ञान-विशेष का

है। चिह्न, रीतिरिवाज तथा अनुष्ठान आदि जिनका सम्बन्ध सात्विक कार्यों से नहीं है, मनुष्य को आध्यात्मिक प्रगति की ओर अग्रसर नही करते है। आध्यात्मिक प्रगति के लिए मूल समस्या मस्तिष्क को बुरी भावनाओ से हटाने की है।

गुरु नानक एकान्त विचार के पक्ष में नही थे। जब वे पर्वत-कन्दराओ मे सिद्ध-योगियों से मिले तो योगियो ने उनसे देश के मैदानी क्षेत्रो की स्थिति के बारे मे पूछा। गुरु नानक ने सर्वसाधारण की पतितावस्था का वर्णन करते हुए कहा कि सिद्धो ने तो अपने को उनमे दूर कर पर्वतो में छिपा लिया है। ऐसी स्थिति में सर्वसाधारण को ससार-समुद्र से पार कौन पर लगावेगा।

गुरु के उपदेशो के अनुसार मनुष्य का समाज के प्रति कुछ कर्तव्य होता है क्योकि उसे समाज ने ही जन्म दिया है और पाला-पोसा है। इसलिए उन्होने सासारिक कार्यो को त्यागने की प्रवृति में असहमति प्रकट की है। जीवन के सर्वोच्च लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उन्होने यौगिक अनुशासन के स्थान पर भक्ति अनुशासन को प्रतिपादित किया। उन्होने बतलाया कि यदि मनुष्य जीवन के वास्तविक लक्ष्य को प्राप्त करना चाहता है, उसे ईश्वर की इच्छा पर अपने आप को समर्पित कर देना चाहिए। इस स्थिति मे मनुष्य की अहम् भावना समाप्त हो जाती है।

अपने शिष्यो को गुरु नानक ने बताया कि आध्यात्मिक जीवन का भवन सत्कर्मों के आधार पर ही खडा किया जा सकता है। उस सर्वशक्तिमान् ईश्वर से साक्षात्कार का सुगम मार्ग 'अहम्' भावना का त्याग ही है। उनका कहना था कि आध्यात्मिक विषयो पर केवल विचार-विनिमय करने से कोई लाभ नही होने का है।

गुरुनानक ने मानव मे रग, वर्ण, जाति व प्रदेश के विभेदों को अग्राह्य माना। उनके अनुसार मनुष्यों के दो ही भेद है-गुरुमुख तथा मनमुख। गुरुमुख लोग ईश्वर की उपासना में रत रहते है, सत्कार्य करते हैं तथा सम्पूर्ण मानव जाति की भलाई मे लीन रहते हैं जबकि मनमुख व्यक्ति अह मे लीन रहते है, अपनी इच्छाओ के अधीन रहते

नही लौटे । इस पर कुछ आदमियो ने यह सोचा कि शायद वे नदी मे डूब गए । इसकी सूचना नवाब को दी गई । नवाब ने गोताखोरो को आदेश दिया और उन्होने अथक प्रयत्न किया गुरु नानक का शरीर ढूँढ निकालने का । गुरु नानक के कपडे जहाँ पडे थे, उसके आस-पास जाल डाल कर उन्हे निकालने की कोशिश की गई किन्तु सफलता नही मिली । गुरु की प्राचीनतम जीवनो मे लिखा है कि 'गुरु को सच्च खड मे ले जाया गया ।' भाई गुरुदास ने इस घटना का वर्णन अपनी पौढी २४ मे इस प्रकार किया है—'पहले बाबा ने ईश्वर का द्वार पा लिया और फिर उसका ज्ञान प्राप्त करने के लिए घोर परिश्रम किया । इस साधना काल मे उन्होंने आक खाया और जमीन पर शयन किया ।'

गुरु नानक को कठिन तपस्या के पश्चात ईश्वरीय ज्ञान की उपलब्धि हुई । इस ज्ञान-प्राप्ति के बाद वे अपने पद से मुक्त हो गए और जो कुछ उनके पास था, उसे गरीबो तथा जरूरतमदो मे बाट कर वे मानव बंधुत्व एव ईश्वरीय साकारता के उपदेश का प्रचार करने निकल पडे । सिख धर्म के आधार मूलमत्र में उन्होने ईश्वर की सत्ता का वर्णन किया है ।

गुरु नानक ने सर्वसाधारण के प्रति अपने कर्त्तव्य की उपेक्षा नही की । उन्होने आम बोलचाल की भाषा मे अपना उपदेश देना आरम्भ किया जिससे उनके उपदेशों को सभी आसानी से समझ सकें । उनका उपदेश है कि ईश्वर सभी वस्तुओ मे व्याप्त है किन्तु सभी वस्तुएं ईश्वर नही हैं । सर्वव्याप्त होते हुए भी ईश्वर अदृश्य है । ईश्वर स्वय स्रष्टा हैं तथा वह काल के प्रभाव से अप्रभावित है । गुरु नानक ने बताया कि शरीर के नाश से आत्मा नही मरती । प्रश्न उठता है कि तब आत्मा का स्वभाव क्या है ? गुरु नानक का विचार है कि सभी आत्माओ की सृष्टि ईश्वर ने की और प्रत्येक आत्मा मे ईश्वरीय अंश व्याप्त है जिसे इस जीवन मे विकसित करना तथा सासारिक क्षणभगुरता से मुक्ति प्राप्त कर ईश्वर में साकार होना हमारा कर्त्तव्य है । जिस तरह वृक्ष का ज्ञान उसमे लगे फलो से होता है, उसी प्रकार मनुष्य की परख उसके कार्यों से होती

गुरु नानक एक नई विचारधारा के प्रवर्त्तक | 4

डा० गोपाल सिंह

गुरु नानक का धर्म के क्षेत्र में योगदान दार्शनिक पक्ष की तुलना में मनोवैज्ञानिक पक्ष में अधिक रहा है। उन्होंने धर्म को ईश्वर के बारे मे विवादपूर्ण सिद्धांतो से मुक्त किया और लोगों को सत्य, सौन्दर्य और प्रेम मे ईश्वर का दर्शन कराया।

गुरु नानक की दृष्टि में हर व्यक्ति पवित्र था। वे दुनिया को काले–गोरे या आस्तिक–नास्तिक के आधार पर विभक्त करने में विश्वास नही रखते थे। उनका कहना था कि मनुष्य या ब्रह्मांड की उत्पत्ति अथवा पुनर्जन्म आदि के बारे में बहस करना व्यर्थ है। हमारे से पहले भी मनुष्य और ब्रह्माड का अस्तित्व था। यद्यपि किसी एक व्यक्ति के लिए विश्व कुछ अल्प क्षणों के अलावा वास्तविक नही है,

हुए कपट, स्वार्थ एव छलप्रपच के व्यवहार में लगे रहते हैं । उनका कहना था कि अनुशासन सबके लिए समान है और जीवन के उच्च एवं वास्तविक उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए सबको--स्त्री या पुरुष-एक ही मार्ग से चलना होगा ।

गुरु नानक का उपदेश है कि सासारिक इच्छाओ से ही अहं की भावना पलती है और इसका नाश हमारा लक्ष्य होना चाहिए । उनके अनुसार ईश्वरीय भक्ति का पहला कदम सतोष अर्थात् इच्छा-निरोध है । दूसरा कदम है मानव-सेवा । यह भी सत्य है कि पहले कदम अर्थात् इच्छा निरोध के बिना दूसरा कदम-मानवसेवा--सभव नही है ।

गुरु ने मानव सेवा के लिए एक और शर्त लगाई है । उनका आदेश है कि ऐसे लोगो को अपना गुरु या आध्यात्मिक उपदेशक न माना जाय जो भिक्षावृति ग्रहण किये है तथा भक्तो के दान पर आश्रित हैं । वे कहते है कि ऐसे भक्त इश्वरीय भक्ति के भजन तो अवश्य गाते हैं किन्तु उनका मस्तिष्क ईश्वरीय ज्ञान से आलोकित नही होता । गुरु कहते हैं कि ऐसे व्यक्तियो के पर न छुओ जो अपने आपको पीर या गुरु कहते हैं किन्तु भिक्षा मागते हैं । उनका कहना है कि सच्चा मार्ग वही पहचान सकता है जो कठोर श्रम से अपनी आजीविका अर्जित करता है तथा उसका एक अ श परोपकार मे भी लगाता है ।

मेरे विचार से इस प्रकार का नि स्वार्थ जीवन तभी सभव है जब व्यक्ति बार-बार गुरु के उपदेशो को पढे, उच्चारण करे तथा उन्हे हृदयगम करे । इसके लिए सन्मार्ग मे लगे व्यक्तियो को सगति भी आवश्यक है क्योकि सगति से मनुष्य में गुणावगुण अनजाने ही आ जाते हैं ।

गुरु ने सगति पर विशेष बल दिया है । उनका कहना है कि संगति का प्रभाव मानव मस्तिष्क पर सीधा पड़ता है तथा स्थायी होता है ।

●

मनुष्य सरीखी ईश्वर की आश्चर्यजनक रचनाओ के बीच आनन्द प्राप्त किया जाए। गुरु नानक ने बचपन मे ही यह कह कर जनेऊ पहनने से इन्कार कर दिया था, 'मैं ऐसा जनेऊ पहनूंगा, जो न मैला होता है, न जलता है और न डूबता है।"

जब उनसे नमाज मे भाग लेने के लिए कहा गया, तो वे इसमें शामिल तो हो गए, लेकिन नमाज पढ़ने के बजाय मुस्करा भर दिए। जब उनसे पूछा गया कि उन्होने ऐसा क्यो किया, तो उनका उत्तर था, "सच्चा मुसलमान तभी बना जा सकता है, करुणा जब मस्जिद हो, विश्वास मुल्ला हो, ईमानदारी से जीविका अर्जित करना कुरान हो, विनम्रता सुन्नत और आत्मसंयम रोजा हो।"

गुरु नानक की सबसे बडी विशेषता यह थी कि वे जिन बातों में विश्वास करते थे, उनका पालन भी करते थे। वे न केवल जात-पांत का विरोध करते थे, बल्कि जब बाहर यात्रा पर जाते तो अछूतो के साथ रहते और उनके साथ भोजन करते। सदा उनके साथ रहने वाला मर्दाना एक नीची जाति का मुसलमान था। उन्होने न केवल बाबर के प्रारभिक रक्तपात का विरोध किया, बल्कि कारावास में भी रहे और तब तक जेल से जाने से इन्कार कर दिया, जब तक उनकी तरह बदी किए गए और व्यक्ति भी न मुक्त कर दिए गए। जब तक कोई अमीर आदमी वैभव, अह, लोभ-प्रदर्शन और बलात् धन वसूल करने की प्रवृत्ति नही छोड़ देता था, तब तक उनसे वे कोई ताल्लुक नही रखते थे। लेकिन अगर कोई हत्यारा भी उचित मार्ग अपनाने की प्रतिज्ञा करता तो वे उसे 'गुरु मुख' नाम दे देते।

जब उन्होने अपनी यात्राएं समाप्त कर ली, तो वे करतारपुर में खेतीबाड़ी करने लगे। 10 वर्ष तक जो व्यक्ति भी उनसे मिलने आया, उसे सभी जातियो और वर्णों के लोगो के साथ बैठकर भोजन करना पड़ता। कहा जाता है कि जब उनका देहावसान हुआ, तो जिस चादर से उनका शरीर ढका था, उसे हिन्दुओ और मुसलमानो ने बराबर-बराबर बाँट लिया। हिन्दुओ ने उसे अग्नि के समर्पित किया और मुसलमानो ने दफनाया।

लेकिन फिर भी इसकी यथार्थता और शाश्वतता को अस्वीकार नही किया जा सकता ।

यदि ईश्वर वास्तविक है, जैसा कि गुरु नानक का विचार था, उसकी बनाई हुई दुनिया भी वास्तविक है। इसलिए दुनिया के कार्यकलाप से निर्लिप्त होना ईश्वर की कृपा, सौन्दर्य और चेतना को अस्वीकार करना है। इसमे सदेह नही कि दुनिया में दु ख और पाप भी है लेकिन मनुष्य को इन बाधाओ के विरुद्ध सघर्ष करना चाहिए और इन पर विजय प्राप्त करनी चाहिए, क्योकि वह न तो मूलत पापो है और न ही नास्तिक। जब उसका अन्त करण जाग उठता है तो वह स्वय को अपने वास्तविक रूप मे देखने लगता है।

गुरु नानक के लिए धर्म एक सामाजिक वास्तविकता थी। उनका विचार था कि यदि धर्म मनुष्य के व्यक्तिगत विश्वास और भावना तक सीमित रहे और सम्पूर्ण समाज मे परिव्याप्त न हो, तो सम्यता का विकास नही हो पाएगा। इसीलिए नानक ने सन्यास के बजाय गृहस्थ जीवन को अपनाया। तीस वर्ष को लम्बो अवधि तक वे पैदल घूम-घूम कर हिन्दू-मुसलमान दोनो के तीर्थों के दर्शन करते रहे। उनका कहना था कि मैं यहा न तो हिन्दू देखता हूँ, न मुसलमान, मैं तो यहा सिर्फ इन्सान को पाता हूँ।

हरिद्वार मे उन्होने पूव को ओर अर्घ्य देने के बजाय पश्चिम की ओर दिया। यह पूछे जाने पर कि उन्होने ऐसा क्यो किया, उनका उत्तर था. "यदि दूसरो का फेका हुआ जल उनके पूर्वजो की तुष्टि के लिए स्वर्ग तक पहुँच सकता है, तो मेरे द्वारा दिया गया जल मेरे खेतो को क्यो नही सीच सकता, जो कुछ ही सौ मील दूर हैं?"

वे दीप, धूप और फूलो आदि से ईश्वर को आरती उतारने मे भी विश्वास नहो रखते थे। उनका कहना था कि जब सूर्य, चन्द्र और नक्षत्र मेरे प्रेम-मार्ग को आलोकित करते हैं, पर्वतो से आने वाली शीतल समीर ईश्वर तक सुगध पहुँचाती है और ईश्वर की वाणी का मौन सगीत हर मनुष्य के हृदय मे गूँजता रहता है, तो पूजा की क्या आवश्यकता है? आवश्यकता तो इस बात की है कि प्रकृति और

गुरु नानक और भक्ति आन्दोलन | 5

—डा० तरण सिंह

गुरु नानक केवल एक भक्त, सन्त, नाथ अथवा पीर मात्र नही थे, वे इन सबसे ऊपर गुरु थे। गुरु में सभी उपर्युक्त गुण होते हैं। उसे परमपिता परमेश्वर से आध्यात्मिक शक्ति मिलती है। परमपिता परमेश्वर स्वयं गुरु नियुक्त करते हैं और वह उन्ही से ज्ञानप्राप्त करता है और जो भी बोलता है वह अधिकार के स्वर में बोलता है। उसे मानवीय आध्यात्मिक शिक्षक ज्ञान नही देते और दूसरे लोग दीक्षा नही देते।

गुरु नानक ने प्राचीन शास्त्रों को प्रमाण नही माना जबकि अन्य सभी सन्तो ने उन्हे स्वीकार किया। गुरु नानक का प्रत्येक शब्द धर्मशास्त्र था और उन्होने एक नई धार्मिक संहिता अथवा विधान

इस प्रकार गुरु नानक की दृष्टि में धर्म-ऐसा ज्ञान या आत्मा का प्रकाश था, जिससे मनुष्य मनुष्य के निकट आता है। उनका कहना था कि विश्वासहीन विवेक, अन्त प्रेरणा शून्य बुद्धि, अनुभवहीन प्रयोग और विवेकहीन आर्थिक प्रगति से मनुष्य को न तो मुक्ति मिलेगी और न शाति। उनका विश्वास था कि आन्तरिक पवित्रता से ही मनुष्य का समाज में या ईश्वर के समक्ष स्थान निर्धारित होता है, बाह्य आचरणो से नही। महज अपने विश्वास के कारण कोई व्यक्ति सदा के लिए कलकित या मुक्त नही हो जाता। उनके अनुसार परम ब्रह्म को प्राप्त करने के एक नहीं, बल्कि अनेक तरीके हैं।

गुरु नानक के अनुसार अपनी धारणाओ के अनुसार मानवता को आस्तिक–नास्तिक के आधार पर विभक्त करना ईश्वर की असीम शक्ति और सर्वज्ञता को अस्वीकार करना है। उनका कहना था कि यदि कोई सच्चे मन और लगन से ऐसी सामाजिक परिस्थितियां उत्पन्न करने की कोशिश करता है, जिसमें मनुष्य की प्रच्छन्न शक्तियों को अभिव्यक्ति मिल सके, तभी उसकी आत्मा सत्य से से साक्षात कर सकेगी।

इस प्रकार स्पष्ट है कि गुरु नानक न तो सिर्फ एक आध्यात्मवादी या सुधारवादी थे, बल्कि एक ऐसे सामाजिक क्रांतिकारी थे, जो मनुष्य या समाज का मूल्याकन उनकी उपलब्धियो से नहीं, बल्कि उसकी आतरिक चेतना से करते थे उनका कहना था कि हमारे काय ही हमारे प्रारम्भ के निर्णायिक हैं और हम मोक्ष अपने विश्वास के जरिये नहीं, अपने अच्छे कार्य के जरिए प्राप्त कर सकते हैं। वे कहते थे कि सत्य सर्वोपरि है, लेकिन इस पर आचरण करना इससे भी कही अधिक उत्तम है।

जोडना चाहते थे और इसमें बिचौलियों—अवतारों और पंडित पुरोहितो—को समाप्त करना चाहते थे ।

सर्वशक्तिमान एक ईश्वर के सिद्धान्त के साथ ही जाति, वर्ण और धर्मों के कारण उत्पन्न सभी भेदभाव स्वत ही समाप्त हो गए। कुछ भक्त कवियो ने, जो स्वय तथाकथित छोटी जाति के थे, जाति-प्रथा का विरोध किया था। बौद्ध धर्म और नाथ सम्प्रदाय में भी जाति-प्रथा की निंदा की गई थी। नानक ने भी जाति-प्रथा का विरोध किया। वे जाति-विहीन समाज मे विश्वास करते थे।

नानक ने ईश्वर, सृष्टि, आत्मा, कर्म आदि के संबध प्रचलित तत्कालीन विचारो का गभीरता से अध्ययन किया। उन्होने ईश्वर के विभिन्न अवतारों को अस्वीकार किया किन्तु उन्हें हिन्दू और इस्लाम धर्म के नैतिक आदर्शों से कोई विरोध न था। उन्होने ईश्वर के अस्तित्व और सर्व शक्तिशाली स्वरूप पर जोर दिया। वे सरल और सीधे तरीके से अपनी बात कहने मे विश्वास करते थे।

जीवन दर्शन

नानक जीवन की सम्पूर्णता विश्वास करते थे। उन्होने सर्वा गीण मानव की कल्पना की, न कि विभक्त मानव को। उनके लिए भक्ति, कर्म और ज्ञान के मार्ग अलग-अलग न थे। इन तीनों का पालन करके ही पूर्णता प्राप्त की जा सकती है। यद्यपि भक्ति मे कर्म तथा ज्ञान का समावेश है तथापि उसका विशेष महत्व है, प्रत्येक व्यक्ति के लिए जरूरी है कि वह अपने अंदर इन तीनों गुणो का उचित समन्वय करे और सत्य की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करे।

देश व्यापी आन्दोलन

गुरु नानक नई चेतना के अग्रदूत थे। उनका आन्दोलन किसी क्षेत्र विशेष तक सीमित नही था। उनका सदेश न केवल भारत वरन् देश की सीमाओं के बाहर भी ध्यान से सुना गया। उनके

गुरु नानक का जीवन और उपदेश 6

—बलवन्त सिंह आनन्द

गुरु नानक का जीवन-काल तीन चरणों में बांटा जा सकता है। प्रत्येक चरण का अपना अलग महत्त्व है। जीवन में पहले चरण में उनका बचपन और प्रारम्भिक यौवनावस्था आते हैं। इस काल में भी उनका झुकाव आध्यात्मिकता की ओर था। जीवन के दूसरे दौर मे उन्होने जगह-जगह जाकर अपने धर्म के सिद्धान्तो का प्रचार किया। 18 वर्ष लम्बा तीसरा और अन्तिम चरण गुरु नानक ने करतारपुर मे व्यतीत किया।

नानक का जन्म लाहौर से लगभग 35 मील दूर तलवन्डी नामक स्थान पर हुआ था। इस जगह को अब ननकाना साहब कहते हैं। एक मौलवी और एक पडित ने उन्हें प्राकृत और फारसी की शिक्षा दी।

स्वभावतः इससे पिता और पुत्र में आपसी फर्क आ गया। एक ओर पिता पुत्र की चाल-ढाल समझ नही पाते थे तो दूसरी ओर पुत्र अपनी आन्तरिक प्रेरणा के कारण दुनियावी नहीं बन सकता था।

इसी प्रकार वर्ष बीतने लगे। अंततः नानक के पिता ने पुत्र का विवाह कर देना ही उचित समझा जिससे उसका ध्यान बंटे। यह कदम बहुत सोच-समझ कर उठाया गया था। यह सोच कर कि विवाह नानक के लिए बंधन का काम करेगा और पारिवारिक जीवन बिताने से उनमें जिम्मेदारी का भाव आएगा। विवाहोपरान्त नानक के दो पुत्र हुए, जिनका नाम लक्ष्मीदास और प्रीतिचंद था। समय मजे से बीतता गया लेकिन नानक ने कोई काम शुरू नहीं किया।

नानक के एक सम्बन्धी जयराम सुल्तानपुर में दौलतखां लोधी के अधीन नौकरी करते थे। इसी बीच उन्होने नानक को लोधी के अधीन नौकरी दिलाने का आश्वासन दिया। नानक के पिता कालू इस बात से प्रसन्न हुए और उन्होंने नानक को सुल्तानपुर भेज दिया। यहा वह भंडाराध्यक्ष नियुक्त किए गए। सुल्तानपुर में ही रबाबवादक मर्दाना और नानक की मुलाकात हुई। दिन में वह भंडार में काम करते थे और सुबह-शाम अपने साथियों के साथ गाते-बजाते और ईश्वरोपासना करते थे।

मानव बन्धुत्व

सुल्तानपुर ही वह स्थान था जहां वह घटना घटी जिससे नानक के जीवन में पूरा परिवर्तन आ गया। एक दिन सूर्योदय से पूर्व वैयाँ नदी के तट पर ध्यानमग्न बैठे हुए उन्हे अलौकिक अनुभव हुआ। उन्हे लगा कि वह ईश्वर के आमने-सामने खड़े हैं। समाधि की यह अवस्था तीन दिन तक चली। इस बीच उन्हें आत्मा और परमात्मा के सम्मिलन का अनुभव हुआ। इस अनुभव को बयान करना असम्भव था। यह तो केवल मौन रह कर ही व्यक्त किया जा सकता था।

गुरु नानक का विचार था कि बिना दैवी अनुमति के धर्म अर्थहीन है। दैवी अनुमति ही परमात्मा से मिलन का एकमात्र साधन है। जीवन और धर्म का अन्तिम लक्ष्य आत्मा और परमात्मा से मिलन ही है। उन्होंने "नाम-स्मरण" के साथ आचार के लिए भी व्यवस्था की। उन्होंने कहा कि इस ऊर्ध्वास्वथा में ही आत्मा-परमात्मा का मिलन सभव है।

गुरु नानक ने "मूलमंत्र" मे ईश्वर के बारे में अपनी धारणा का उल्लेख इस प्रकार किया :

"ईश्वर एक ही है जो सृजनहार है, सर्व व्यापक है, जो किसी प्रकार के भय और घृणा से परे है, जो अजन्मा है, जो प्रकाश देता है, दयालु है। ईश्वर आदिकाल से ही सत्य रहा है और हमेशा सत्य रहेगा।" नानक ने ब्रह्म को सगुण और निर्गुण दोनों माना है और अततः ईश्वर को ऐसा रूप दिया जो एक साथ ही प्रेमी, पिता, माता, भाई, सहयोगी और मित्र है। यह ईश्वर भक्ति और प्रेम से ही प्राप्त किया जा सकता है। नानक ने गुरु को अत्यधिक महत्व दिया। गुरु वह जहाज है जिसके माध्यम से मनुष्य जीवन रूपी समुद्र को पार करता है। उसकी सहायता से आध्यात्मिक विकास होता है और गुरु में अपने अनुभवो को अपने शिष्य को प्रदान करने की शक्ति होती है।

गुरु नानक ज्ञान-मार्ग या कर्म-मार्ग मे नही, बल्कि भक्ति-मार्ग में विश्वास रखते थे। भक्ति का तात्पर्य है प्रेम और आराधना के माध्यम से आत्मसम्मान। भक्ति के दोनो मार्गों के बावजूद उन्होने भगवत् कृपा को सर्वाधिक महत्व दिया। उन्होने कहा कि मोक्ष भगवान की कृपा होने पर ही प्राप्त किया जा सकता है। कर्म के सिद्धान्त में गुरु नानक की आस्था थी। पुनर्जन्म कर्म पर आधारित है, अर्थात् पिछले कर्मों का फल नए जन्म मे मिलता है लेकिन मनुष्य सेवा में लीन होकर नैतिक जीवन व्यतीत करके तथा ईश्वर का नाम सुमिरन करके अपना भाग्य बदल सकता है। मानव जीवन पवित्र है क्योकि इसके कारण मनुष्य को मोक्ष की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करने का अवसर मिलता है।

गुरु नानक के विचार | 7

— खुशवत सिंह

कुछ सप्ताह पूर्व पटियाला मे पजाबी विश्वविद्यालय ने गुरु नानक के जीवन और उनकी शिक्षा पर एक गोष्ठी का आयोजन किया था। गोष्ठी में लगभग ६० विद्वानों ने अपने निबंध पढे, जिनमे अमरीका, कनाडा, ब्रिटेन और आस्ट्रेलिया के भी १५ विद्वान् थे। ये विद्वान दो विचारधाराओ का प्रतिनिधित्व करते थे-एक वे जो गुरु नानक को भक्ति-आन्दोलन का सत मानते थे और दूसरे वे जो गुरु नानक को हिन्दू और इस्लाम धर्मों के बीच समन्वय स्थापित कर सिक्ख धर्म का जन्मदाता मानते थे। दोनो ही पक्षों ने अपने तर्क की पुष्टि के लिए नानक के भजनों को उद्धृत किया।

मानव जीवन, ईश्वर, धर्मगुरु के कर्त्तव्य, मानव के मानव के प्रति दायित्व और निर्वाण-प्राप्ति के मार्ग के बारे मे नानक के क्या

संसार में है, पर वह सांसारिकता से दूर है। नानक का एक भजन है—

"धर्म का दर्शन योगी के वस्त्रों, उसके तिलक, उसके शरीर पर पुती भस्म, उसके कान के कुंडलो, उसके खल्वाट सिर या शंख के स्वर में नही होगा। यदि आप सच्चे धर्म के दर्शन करना चाहते हैं तो संसार की कलुषता के बीच रहकर भी उससे दूर रहिए।"

नानक ने जाति-प्रथा की कठोर शब्दों में निंदा की। उन्होने उन लोगों से मिलने से इन्कार कर दिया था जो लंगर में भोजन करने नही आते थे। लगर मे ब्राह्मण और गैर-ब्राह्मण, हिन्दू और मुसलमान सभी एक साथ बैठकर भोजन करते थे। गुरु नानक समाज मे छुआछूत, ऊंच-नीच के विरोधी थे।

नानक का ध्येय क्या था, अब हम इस बात पर विचार करेंगे। नानक कहा करते थे कि मानव-जन्म एक अमूल्य भेंट है। ईश्वर हमें मानव-जन्म प्रदान कर जन्म-मरण और पुनर्जन्म से छुटकारा पाने का अवसर देता है। हमारे जीवन का ध्येय योग होना चाहिए। नानक ने अनेक बार यह कहा था कि मेरे पास भगवान का नाम सुमिरन करने के अलावा कोई चमत्कार नही है।

जिस प्रकार धीमी आच पर पकी सब्जी ज्यादा स्वादिष्ट होती है, उसी प्रकार शरीर और मन को धीरे धीरे प्रशिक्षित करने से परमानन्द की प्राप्ति होती है। गुरु नानक अपने अनुयायियों से यह अपेक्षा करते थे कि वे पौ फटने से पहले उठे क्योकि ईश्वर-मिलन के लिए यही अमृतवेला है।

एक ही है। अतएव विभिन्न धर्मावलम्बियों की धर्मांधता नितान्त निरर्थक है।

गुरु नानक ने सभी धर्मों और जातियों में प्रचलित बाह्याडम्बर की आलोचना की। उन्होंने कहा "केवल परम सत्य की पूजा करो। यदि मन अपवित्र है तो मूर्तिपूजा, तीर्थयात्रा अथवा एकान्तवास सभी निरर्थक है।"

नानक ने किसी वर्ग-विशेष के लिए नही, वरन् समूची मानवता के लिए प्रेम और पवित्रता का संदेश दिया। उन्होने धर्म के सहज रूप पर जोर दिया और अन्धविश्वास, कर्मकाड एवम् धर्मांधता से मानव मन को मुक्त कराने का प्रयत्न किया। नानक के संदेश का सर्वाधिक महत्त्व यह है कि वह किसी काल अथवा स्थान-विशेष से परिबद्ध नही हैं। उनका संदेश कभी भी, कही भी पढ़ा जाए, वह समीचीन एवम् सार्थक है।

गाधी शताब्दी वर्ष में अहिंसा के बारे में नानक को धारणा वशेष द्रष्टव्य है। नानक के अनुसार मन, वचन और कर्म से अहिंसा का तात्पर्य है—किसी के लिए बुरा मत सोचो, किसी को बुरा मत कहो और किसी के मार्ग में बाधक न बनो।

नानक के विचार केवल आध्यात्मिक दृष्टि से ही नहीं, सामाजिक दृष्टि से भी विशेष महत्त्वपूर्ण हैं। उन्होने मनुष्य को सदा केवल मनुष्य ही समझा और जाति, वर्ण, धर्म और भाषा आदि के आधार पर भेदभाव का कडा विरोध किया। उन्होंने इस बात को कभी महत्त्व नही दिया कि किसी व्यक्ति की सामाजिक प्रतिष्ठा क्या है। वे तो मनुष्य के केवल आत्मिक गुणों के ग्राहक थे।

यद्यपि गुरु नानक अपने जीवनकाल में ही पूजे जाने लगे थे, तथापि वे इतने विनम्र थे कि उन्होने अपने आप को एक 'सेवादार', 'नीचो में नीच' और 'दरिद्रों में दरिद्र' कहा। उन्होंने गरीबों की भलाई के लिए उपदेश ही नही दिए, वे स्वयं भी एक गरीब की तरह

इन्कार कर दिया। उनके अनुसार "वही राजा राज करने लायक है, जिसमें सद्गुण हों और जो पचों की इच्छाओं और निर्णयों का सम्मान करे।" गांधी जी को 'रामराज्य' की कल्पना भी ऐसी ही थी और आधुनिक शब्दावली में 'लोकतंत्र' भो यही है।

गुरु नानक ने मनुष्य के नैतिक और आध्यात्मिक विकास के लिए स्वतन्त्रता को आवश्यक माना है। हिसा और बल प्रयोग से अविश्वास, क्षोभ और निराशा जन्म लेती है। अतएव इनसे नैतिक पक्ष कमजोर होता है। इसीलिए नानक ने सदा धार्मिक और सास्कृतिक स्वतंत्रता की आवश्यकता पर जोर दिया।

प्रयोग मिलता है। नानक-वाणी मे सबद, असटपदीआं, छंद और वारां होती है। पद मे अगर पहली चीज न हो तो दूसरी से वे शुरू किए जाते है। यहाँ हम उनकी राष्ट्रीय एकता की देन को चर्चा करेंगे।

पहले उनकी भाषा लीजिए। वे हिन्दुस्तान भर मे घूमे थे। हिन्दुस्तान के बाहर भी उन्होने ईरान और अरबस्तान तक सफर किया, ऐसा कहा जाता है। इसलिए उनकी भाषा मे भी सब भाषाओ के शब्द मिल जाते हैं। पूर्वी पज.बी उनकी भाषा का मूल आधार है। पर जगह-जगह पर खड़ी बोली, ब्रजभाषा, रेखता और कही कही सिंधी और लहदा बोली के भी काफी शब्द और मुहावरे उनके यहाँ मिलते हैं। इस तरह से उनकी जबान में एक इंद्रधनुष की-सी रंगत पैदा हो गई है। वे जनता की भाषा में लिखने के कायल थे। पडितों की ऊंची भाषा मे लिख कर वे चकित करना नही चाहते थे। खड़ी बोली के कई क्रिया-प्रयोग, जैसे दिखाइआ, आइआ, मरता जीता, मिलैगा, करउगी, करि, किरपा, मिलाइजा, पहरउगी, उनके राग गउड़ी, आसा, सबद आदि मे मिलते है। वैसे ही ब्रज भाषा के कई नमूने है, जैसे :

1 हरि हरि नामु भगति प्रिया प्रीतम सुख साजन उर धारे।
भगतिवछलु जग-जीवनु दाता गति गुरमति मिसतारे ॥

2. कानी गागरी देह गुहेली उदमै दिन से बुमु पाई

3. आपि तरे सगति कुल तारे ।

उनकी बानी मे दूनिया, मुकाम, अनाँ, तहकीक, दिल, गिफले जैसे लफ्ज मिलते हैं, वहाँ संस्कृत-प्राकृत के भी कई शब्द है। यानी गुरु नानक जबान के मामले में, कोई परहेज नही बरतते थे।

यही बात उनके विचारो के बारे में है। वे मनुष्य मात्र को समान समझते थे। इसलिए वे हिन्दू और मुसलमान दोनों के दोष दिखाने से डरते न थे। 'आसा दी वार' के 34 वे सलोक में वे दोनों के पाखड की निंदा करते हैं।

(अर्थ ज्योति जानो, जात मत पूछो, आगे यानी पहले जात पात नही थी ।)

गुरु नानक की ये बाते बुद्ध के धम्मद में 'ब्राह्मण वग्गो' खंड की याद दिलाती हैं ।

गुरु नानक न सिर्फ भाषा के मामले मे सर्व सग्राहक थे और सब धर्मों के सार को मनुष्य धर्म के रूप मे देखते थे वरन् कवि के नाते उनकी रचनाओ मे बडी सुन्दर उपमाए और उत्प्रेक्षाए, पूरे रूपक मिल जाते है । यहा मैं उनकी बानी से तीन मनोरजक रूपक देना चाहता हूँ :

1. नाम रूपी सिक्का कैसे ढाला जाता है ? (जपुजी पउडी 38)

"सयम या इंद्रिय–दमन की भट्टी बनाओ । धीरज सुनार हो । बुद्धि निहाई, गुरु से मिला ज्ञान या वेद हथौडी हो । परमात्मा का भय धौकनी । तपस्या आग । प्रेम पात्र हो । नाम रूपी अमृत गलाया हुआ सोना हो । इस तरह से सच्ची टकसाल बनती है, जहा गुरु के शब्द के सिक्के ढलते हैं ।"

2. दूध– दही जमाने के उदाहरण से आध्यात्मिक उपदेश (सूही सगु सबद ।)

"मन का बरतन धोकर उसमें धप दो, फिर उसमे दूध लेनें जाओ । शुभ कर्म दूध है, सुरति जामन है । निष्काम होकर दूध जमाओ । नीद न आना ही मथानी को नेती हो, जीभ से नाम जपना ही दही मथना हो । इसी तरह से मक्खन रूपी अमृत बिलोकर निकालो ।"

3. अमृत–रस रूपी मदिरा कैसे बनायें ? (रागु आसा सबद 38,1)

"हे साधक, परमात्मा के ज्ञान को गुड़ बनाओ, ध्यान को महुआ और शुभ कर्म को बबूल की छाल । इन सब को एक मे मिला

योगमार्ग को सरल भाषा में जनसाधारण तक पहुँचाना जनता में निर्भयता जगाना और धर्म की अर्थ-रूढ़ियों से अधिक मनुष्य के महत्व और महातम का बखान करना गुरु नानक का बहुत बड़ा योगदान है। ज्ञान मार्ग तो और भी सिद्धों और संतो ने बताया, पर ज्ञान की सच्ची मर्यादा गुरु नानक ने बतलाई। इसलिए हमें उनका कृतज्ञ होना चाहिए—हम सब धर्मानुयायियों को, सब भाषा वालों को।

में, दूसरी दक्षिण, तीसरी उत्तर और चौथी यात्रा पश्चिम में और मध्य-पूर्व क्षेत्र मे हुई। अपनी यात्रा के पांचवें और अन्तिम चरण में उन्होंने पंजाब का भ्रमण किया।

प्रथम उदासी

गुरु नानक पहले पहल पूर्व दिशा में गए और उन्होंने सबसे पहले सईदपुर (अमीनाबाद) में अपना पड़ाव डाला। उस समय उनकी आयु लगभग 31 वर्ष थी। मर्दाना गुरु नानक के साथ थे। गुरु नानक के पदो और मर्दाना के रवाब की स्वर-लहरी से श्रोता मंत्रमुग्ध हो जाते थे। अमीनाबाद से गुरु नानक मुल्तान जिला में तालम्बा नामक स्थान में गए, जहाँ उनकी भेट सज्जन ठग से हुई। सज्जन ठग एक मस्जिद और एक मंदिर की रखवाली करता था और उनमें ठहरने वाले मुसलमान और हिन्दू यात्रियों को लूट कर रात में उनका वध कर डालता था। गुरु नानक के उपदेश का उस पर इतना प्रभाव पड़ा कि उसने इन सब पाप कर्मों का परित्याग कर दिया।

गुरु नानक जानवरों और लुटेरों से भरे जंगलो को पार करते हुए कुरुक्षेत्र और फिर हरिद्वार गए, जहाँ उन्होने अन्धविश्वासों और झूठे रीतिरिवाजो के विरुद्ध प्रचार किया। वे फिर पानीपत, दिल्ली, वाराणसी और गोरख माता गए। उनके प्रभाव के कारण गोरख माता का नाम बाद में नानक माता ही हो गया। वे कामरूप (असम) भी गए और उनकी इस यात्रा के बारे मे कई घटनाओं का उल्लेख आता है। गुरु नानक असम की यात्रा के बाद मिन्टगुमरी जिले के पाकपसन से होते हुए पुन पंजाब लौट आए। पाकपसन मे उन्होने शेख फरीद के शिष्य शेख ब्राहम से भेट की और धार्मिक विषयो पर बातचीत की। शेख ब्राहम के पद गुरु ग्रन्थ साहब मे संगृहीत हैं।

दूसरी उदासी

गुरु नानक ने अपनी दूसरी यात्रा 1506 में आरम्भ की और उन्होने सिरसा, बीकानेर, अजमेर, माउन्ट आबू, पुरी, नागपत्तम और

हाथ से ही रोक लिया और उस शिला पर उनके हाथ के निशान आज भी विद्यमान हैं। यह स्थान अब पाकिस्तान मे है, पर भारत से हजारो तीर्थयात्री अब भी प्रति वर्ष गुरुद्वारा पंजा साहब देखने जाते है।

पांचवीं उदासी

अपनी यात्रा के अन्तिम चरण मे गुरु नानक ने पंजाब के विभिन्न क्षेत्रो का दूर-दूर तक भ्रमण किया। वे पाकपत्तन, देपालपुर, कंगापुर, सुल्तानपुर, वेरोवाल, जलालाबाद और बिरिया आदि स्थानो में गए और उन्होने अनेक लोगो को सिख धर्म की दीक्षा दी। वे फिर बटाला होते हुए अमीनाबाद पहुँचे, जहाँ 1524 मे बाबर ने उन्हे मर्दाना और अन्य सैकडो लोगो के साथ गिरफतार कर लिया। इस प्रकार गुरु नानक की बाबर से भेंट हुई और उन्होने बाबर के अत्याचारो की खुलकर निंदा की।

गुरु नानक पसरुर, सियालकोट, मीटन कोट और कर्तारपुर पहुँचे। रावी नदी के तट पर कर्तारपुर नगर की स्थापना गुरु नानक ने ही की और वे वहा स्थायी रूप से बस गए। अपने जीवन के अन्तिम दिन तक वे वही रहे।

×

श्रीलका का भ्रमण किया। उनके साथ सैदी और घेबो नामक दो जाट भी थे। वे जहाँ-जहाँ भी गए, उन्होने दुराचारियो को सदाचरण की शिक्षा दो और वहुत से लोग उनके अनुगामी बन गए। पुरी मे उन्होने आरती का वास्तविक अर्थ बताया और पुजारियो को समझाया कि केवल कर्मकाड मे कुछ नही रखा है। श्रीलका में वे राजा शिवनाभ से मिले, जो गुरु नानक के शिष्य हो गये। लौटते समय गुरु नानक ने लाहौर के दो समृद्ध व्यक्तियो को अपना शिष्य बनाया, जिनके नाम दुनीचन्द और करोडीमल थे।

तीसरी उदासी

नासू और सीहा नामक दो शिष्यो के साथ गुरु नानक ने अपनी तीसरी यात्रा 1514 मे आरम्भ की। इस बार वे कश्मीर गए, जहाँ से वे कैलाश पर्वत होते हुए मानसरोवर पहुँचे। कहा जाता है कि वे यहाँ से और अधिक ऊँचे पहाडो को पार करते हुए तिब्बत और चीन के नानकिग क्षेत्र भी गए। कश्मीर मे वे ब्रह्मदास से मिले और मानसरोवर मे उन्होने योगियो को जीवन का वास्तविक अर्थ समझाया और उन्हे बताया कि मानव-जाति के प्रति उनका क्या कर्त्तव्य है।

चौथी उदासी

गुरु नानक हाजी के वेश मे 1519 मे मक्का गए। मक्का मे गुरु नानक ने अपने चमत्कार से यह समझाया कि ईश्वर तो सर्वव्यापी है और इस प्रकार जिधर भी देखो, वही काबा है। वे यरुशलम, दमिश्क और अलेप्पो होते हुए बगदाद पहुँचे, जहाँ वे चार महीने तक ठहरे। वे तुर्की भी गए और वहाँ उन्होने सुल्तान से भेंट की। कुछ इतिहासकारो के कथनानुसार वे मिश्र भी गए। कहा जाता है कि बगदाद मे गुरु नानक ने बहोल के शाह को सिख धर्म की दीक्षा दी। लौटते समय गुरु नानक रावलपिडी के निकट हसन अब्दल पहुँचे, जहाँ वली कधारी ने एक पहाड़ के ऊपर से गुरु नानक के ऊपर एक बहुत बडी शिला फेंकी। गुरु नानक ने प्रस्तर-शिला को

गुरु नानक ने केवल अपनी मातृभाषा पंजाबी मे ही नही लिखा, बल्कि साहित्यिक भाषा, जिसे हम 'साधु भाषा' कह सकते है, मे भी लिखा। इसके अतिरिक्त उन्होंने फारसी में भी रचनाए लिखी। वे अन्य धर्मग्रन्थो के भी अच्छे ज्ञाता थे और लोक-साहित्य तथा विभिन्न वर्गों के रीति-रिवाजो से भलीभाति परिचित थे। उर्दू के विकास और अकबर द्वारा 'दीने इलाही' के प्रवर्तन में भी नानक का बहुत बड़ा हाथ है। अकबर गुरु नानक के बहुत बड़े प्रशसक थे।

नानक मुक्त छन्द और स्वच्छन्द छन्द अपनाने वाले संभवत. प्रथम भारतीय कवि थे। खेद का विषय है कि हिन्दी साहित्य के आधुनिक युग के इस प्रवर्तक कवि के इस पक्ष के बारे में अभी तक कोई गभीर अध्ययन नही हुआ है।

युवावस्था में नानक को बीमार समझा गया था और उन्हे देखने के लिए एक वैद्य बुलाया गया। इस पर गुरु नानक ने जो कहा वह आश्चर्यजनक रूप से बिल्कुल इस समय की रचना लगती है। नानक के पद्य का भावार्थ इस प्रकार है :

> मुझे केवल एक ही रोग है कि मै अपने आप
> से अलग हो गया हूँ। मेरा दूसरा रोग यह
> है कि जो मुझे होना चाहिए, मैं वह होना
> चाहता हूँ। मै मृत्यु की आख में गड़ रहा हूँ
> और यह विभीषिका मेरा तीसरा रोग है। मनुष्य
> केवल मरने के लिए पैदा होता है और कष्ट
> भोगता है। मै इस कष्ट से भी मुक्त हूँ।
> सुनो वैद्य, तुम मेरे किस कष्ट का निवारण कर
> सकते हो ?

नानक यद्यपि अध्यात्मवाद के कवि समझे जाते है, पर वे वस्तुतः सूक्तियो के अधिक निकट थे। उनकी कविता औपचारिक अध्यात्मवाद की अपेक्षा अधिक लयात्मक और व्यक्तिपरक है। वे रूढिवादी अथवा कठोर सिद्धान्तवादी नही थे और उन्होने जो कुछ कहा वह आज के युग मे बिल्कुल सही एवं सार्थक सिद्ध हुआ है।

गुरु नानक की काव्य कला | 11

—डा० गोविन्द सिंह

गुरु नानक एक सन्त, एक समाज–सुधारक और एक धर्मप्रवर्तक होने के साथ-साथ एक महान् कवि भी थे। यह कहना अनुचित न होगा कि भारतीय साहित्य का आधुनिक काल गुरु नानक से ही शुरू होता है।

गुरु नानक ने भारतीय काव्यशास्त्र के लगभग सभी छन्दो का उपयोग किया। इसके अतिरिक्त उन्होने लोकगीतो के छन्दो को भी अपनाया। शास्त्रीय छन्दो का उन्होने उपयोग तो किया, पर एक नये तरीके मे। उनके छन्द उनके कथ्य के अनुगामी थे, यह नही कि भाषा और शैलो के लालित्य के लिए कथ्य के महत्व को कही भी गौण बना दिया गया हो।

नानक ने धर्म, जाति, भाषा, राष्ट्र आदि कोई भी बंधन स्वीकार नही किया। नानक ने अपरिग्रह का उपदेश ही नहीं दिया स्वयं उसका पालन भी किया। वे एक साधारण मनुष्य की तरह ही लोगों के साथ रहे। नानक के सन्देशवाहको मे हिन्दू और मुसलमान दोनों ही धर्मों के नितान्त साधारण व्यक्ति थे। कुछ अर्से तक संन्यासी का जीवन व्यतीत करने के बाद वे फिर एक गृहस्थ और किसान बन गए।

गुरु नानक की रचनाओ मे कही भी वैज्ञानिक प्रगति का विरोध नही किया गया है। एक सन्त और धार्मिक नेता के लिए यह कुछ आश्चर्यजनक प्रतीत होता है, पर इससे स्पष्ट है कि वे एक बहुत बड़े द्रष्टा और विचारक थे।

उनमे जब यह पूछा गया कि वे क्या हैं, तो उन्होने उत्तर दिया कि मैं पंच तत्वो का बना एक साधारण मनुष्य हूँ। मुझे कोई हिन्दू या कोई मुसलमान नजर नही आता।

पुरी में गुरु नानक से जब जगन्नाथ की आरती करने के लिए कहा गया, तो उन्होने कहा कि चाद-सूरज सभी मेरे जगन्नाथ की आराधना कर रहे हैं। उसी की भक्ति से वायुमंडल सुरभित है और सभी वन-उपवनों के फूल उसी को अर्पित हैं। हम नगण्य मनुष्य उसकी क्या आरती कर सकते हैं।

वृन्दावन मे पैसा इकट्ठा करने के लिए कृष्णलीला करने वाले कुछ नर्तको को देखकर उन्होने कहा कि कोल्हू भी नाचता है और चरखा भी चलता है। कुम्हार का चाक भी इसी तरह नाचता रहता है। गुरु नानक के इस कथन से वे नर्तक बहुत लज्जित हुए।

गुरु नानक की रचनाओ मे अनोखा लालित्य है। भौतिक सुखो के पीछे दौड़ने वाले मनुष्य को देख कर वे कहते हैं :

—ओ काले मृग, तुम उपवन के सौन्दर्य से इतने आकृष्ट क्यों हो? बुराई का फल केवल एक दिन ही मीठा लगता है और बाद मे वह कष्ट देता है। यह ससार समुद्र की एक लहर के समान है, जो क्षण भर के लिए आकर फिर लौट जाती है। नानक तुमसे सच कहता है कि तुम्हारो कल मृत्यु हो जाएगो, अतएव ईश्वर का ध्यान करो।

आत्मा और परमात्मा के मिलन का चित्रण गुरु नानक ने बहुत ही सुन्दर शैली मे किया है। उन्होने अमूर्त सौन्दर्य को मूर्त सौन्दर्य के माध्यम से भी व्यक्त किया है। अतएव वर-वधू के प्रतीक उनकी रचनाओ मे बार-बार आते हैं और उन्होने प्रेमी-प्रेमिका की विरह-व्यथा और मिलन की उत्कंठा का सुन्दर चित्रण किया है।

नानक की शैली इतनी सरल है कि उनकी रचनाएं हमारे लोक-साहित्य का एक अभिन्न अंग बन गयी हैं।

भरे कटोरे के ऊपर रहेंगे और सबको सुवासित करेंगे। वास्तव में सच्चे संत को किसी से झगड़ा नही रहता। वे तो ईश्वर और मनुष्य की सेवा में तन्मय रहते हैं।

गुरु नानक ने चार लम्बी पैदल यात्राए की। एक यात्रा में वे उत्तर मे हिममंडित हिमालय की ओर गए, जहां वे लामाओं, सिद्धों व नाथों, तिब्बतियो और चीनियो से मिले। दूसरो यात्रा में वे पूरब, उत्तर प्रदेश, बंगाल और बर्मा गए तथा तीसरी यात्रा में वे दक्षिण श्रीलंका गए। चौथी यात्रा में वे बलूचिस्तान, अफगानिस्तान, फारस तथा मक्का, यरूशलम, मिश्र और तुर्की समेत अरब प्रदेश गए। इन यात्राओं में उनका लगभग 30 वर्ष बीता, जबकि उन दिनो यातायात और परिवहन के साधन नाममात्र को भी नही थे।

गुरु नानक ने अनेक प्रकार से लाखों लोगों के दिल और दिमाग में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाए। उनकी शिक्षा का अब भी उतना ही महत्त्व है, जितना उनके समय में था। सामाजिक और नैतिक पुनरुत्थान के लिए उनकी प्रेरणा की बडी आवश्यकता है।

गुरु नानक ऐसे समय में आए जब अविश्वास और घृणा का बोलबाला था। उन्होंने देखा कि लोग दुःख और तकलीफ के जाल में फसे हुए हैं। लोगो के दुख-दर्द को देखकर उन्होने ईश्वर से प्रार्थना की। जब वे मुगल बादशाह बाबर के सम्पर्क में आए तो बाबर ने गुरु नानक से कुछ मागने को कहा। इस पर गुरु नानक ने कहा कि ईश्वर ही एक मात्र दाता है और नानक केवल उन्ही का कृपाकाक्षी है।

बाबर ऐसे संतो का बडा आदर करते थे। एक बार जब उन्हें मालूम हुआ कि नानक जी को कैद में बद कर दिया गया है तो उन्होने नानक जी को तुरन्त रिहा करने का आदेश दिया। जब बाबर नानक जी के व्यक्तिगत सम्पर्क मे आए तो उनके अनुरोध पर गुरु नानक ने उन्हे 'नसीहत नामा' की सीख अपनाने को कहा। उन्होने बादशाह को प्रतिदिन ईश्वर की पूजा करने और हरेक के प्रति न्याय और दया का बर्ताव करने को कहा। उन्होंने कहा कि ईश्वर के प्रेम

गुरु नानक का सन्देश | 12

—सन्त किरपाल सिह

गुरु नानक पर सिखो या भारत का ही एकाधिकार नही है। वे पूरी मानव-जाति के है। ईश्वर और मनुष्य के प्रति प्रेम ही उनके सन्देश का सार है। हमे शाति और नम्रता से गरीबो की सेवा और अतीत के सभी संतो का आदर करना सीखना चाहिए। यह गुरु नानक की पहली बडी सीख है।

जब वे पीरो और फकीरो की भूमि मुलतान गए तो उनके पास दूध से भरा एक कटोरा भेजा गया। इसका अर्थ यह था कि वह स्थान सतो व महात्माओ से पहले से ही भरा है तथा किसी और के लिए स्थान नही है। नानक जी ने दूध के कटोरे में चमेली का फूल डालकर लौटा दिया। इसका अर्थ यह था कि वे फूल की तरह ही

गुरु नानक की वाणी

के

उद्धरण

को हृदय मे सबसे ऊँचा स्थान देना चाहिए और किसी की भावना को ठेस नही पहुँचानी चाहिए।

उन्होने असली शिक्षा के रहस्य के बारे मे भी लिखा है। एक बार अपने शिक्षक से उन्होने कहा कि अपने हृदय को दवात बनाकर उसमे प्रेम की कलम से बार-बार ईश्वर का नाम लिखना चाहिए।

गुरु नानक ने एक बार ध्यानावस्था मे कहा था कि कोई हिन्दू या मुसलमान नही है, अर्थात् दोनो के बीच कोई मूलभूत अन्तर नही है।

नाम और सतनाम से पूरी सृष्टि पर नियंत्रण है। यह शरीर ईश्वर का मदिर है, जिसमे हमारा और ईश्वर दोनो का वास है। पूरी दुनिया ईश्वर का निवास है। सक्षम आध्यात्मिक गुरु की मदद से उन सबका अनुभव किया जा सकता है। जब तक हम भौतिक, मानसिक और आध्यात्मिक रूप से मानव की एकता को नही समझते, मानव जाति के बीच सच्ची एकता सभव नही है।

गुरु नानक देव की वाणी

[1] ओ
सतिनामु
करता पुरखु
निरभउ निरवैरु
अकाल मूरति
अजूनी सैभ
गुर प्रसादि ॥

ईश्वर निराकार है। वह एक है। उसका नाम सच्चा है तथा वह समस्त सृष्टि को रचने वाला अकाल पुरुष है। वह भयविहीन है और किसी से वैर नही करता। भगवान तीनो कालो से परे, मृत्यु रहित, जन्म-मरण के बन्धन से मुक्त तथा स्वप्रकाशित है। उसकी प्राप्ति गुरु की कृपा से होती है।

[2] थापिया न जाइ, कीता ना होई। आपे आप निरंजनु सोई।

भगवान की न तो स्थापना की जा सकती है और न ही उसका निर्माण हो सकता है। वह स्वयभू और निरंजन है।

[3] आदि सचु
जुगादि सचु
है भी सचु
नानक होसी भी सचु ॥

ईश्वर प्रारम्भ मे भी सत्य है, युगो युगादियो मे भी सत्य है, अब भी सत्य है और भविष्य मे भी सत्य रहेगा।

[6] मिहर मसीति सिदकु मुसला हकु हलालु कुराणु।
सरम सुन्नति सीलु रोजा होहु मुसलमाणु।
करणी काबा, सचु पीरु कलमा करम निवाज।
तसबी सा तिसु भावसी नानक रखै लाज।

सच्चे मुसलमान की पहचान देते हुए गुरु नानक कहते हैं कि सच्चा मुसलमान वही है जो 'सत्य को चटाई, ईमानदारी की कमाई को कुरान, नम्रता को रोजा, अच्छे कार्यों को काबा, सत्य को पीर और सत्य जीवन निर्वाह को वन्दना मानता है। यदि उपर्युक्त ढग से जीवन यापन किया जाए तभी भगवान उसके माला फेरने को ग्रहण करते हैं।

[7] सिम्मल रुखु सराइरा अति दीरघ अति मुचु।
उइ जि आवहि आस करि जाहि निरासे कितु।
फल फिके फुल बक बके कम्मि न आवहि पत।
मिठतु नीवी नानका गुण चगि आईया ततु।

गुरु नानक ने गर्व से युक्त मानव की तुलना सेमल के वृक्ष से की है। वे कहते हैं कि—सेमल का वृक्ष अत्यन्त बडा, तीर के समान सीधा और ऊँचा होता है। पक्षी उसके पास आशा से आता है और निराश होकर वापस चला जाता है। उसके फल फीके और फूल बकबके हैं, यहाँ तक कि उसके पत्ते भी किसी के काम नही आते। उनके अनुसार मिठास नम्रता मे ही है और इसी मे समस्त सद्गुणो का तत्त्व निहित है।

[8] रैण गवाई सोई कै,
दिवस गवाया खाय
हीरे जैसा जनमु है
कउडी बदले जाय ॥

गुरु नानक कहते हैं कि मनुष्य ने रात तो सो कर व्यतीत कर दी और दिन खाने-पीने मे बिता दिया। इस प्रकार अपने हीरे जैसे अनमोल जीवन को कौड़ियो के मोल बेच दिया।

हकु पराया नानका उस सूअर उस गाय।
गुरु पीरु हामा ता भरे जा मुरदार न खाय।
गल्ली भिसति न जाईयै छुटै सचु कमाय।
मारण पाहि हराम महि होई हलालु ना जाइ।
नानक गल्ली कूडीई कुडो पलै पाइ॥

पराए हक को मारना एक के लिए (हिन्दू के लिए) गोमास खाने के समान और दूसरे (मुसलमान) के लिए सूअर का मास खाने के समान है। गुरु और पीर तो तुम्हारे लिए तभी बोलेंगे (मुक्ति के लिए तभी प्रयत्न करेंगे) यदि तुम मरे जानवरो की लाशों को ना खाओ। धार्मिक सत्य का जीवन ही मुक्तिप्रद होगा। कोरी बातो से स्वर्ग की गलियो मे प्रविष्ट नहीं हो सकते। किसी प्रकार से भी हराम हलाल नही हो सकता। गुरु नानक कहते हैं कि यदि झूठ की गलियो मे भ्रमण करोगे तो असत्य ही तुम्हारे पल्ले पड़ेगा।

[5] जिन बोलि पति पाइयै सो बोल्या परवाण।
फिक्का बोल विगुचणा सुनि मूरख मन अजाण।
जो तिसु भावहि से भले होर कि करण वखान।
तिन मति तिन पति तिन धनु पलै जिन हिरदय
रह्या समाय।
तिन का क्या सलाहना अरज सूआलिहु काय।
नानक नदरी बाहरे राचहि दानि न नाय॥

जो बोलने से प्रतिष्ठा प्राप्त हो वही बोलना ठीक है। हे मूर्ख अज्ञानी मन सुनो—फीका बोल बोलने से सिवाय विनाश के और कुछ प्राप्त नही होता। जो व्यक्ति भगवान की कृपा के पात्र हैं, वही भले हैं, दूसरो के लिए क्या कहना। जिनके हृदय मे ईश्वर विद्यमान है, वही बुद्धिमान हैं, प्रतिष्ठित हैं और उन्ही के यहा जीवन के ऐश्वर्य हैं। जिन लोगो ने भगवान की भक्ति मे जीवन लगा दिया है उनकी जितनी सराहना की जाय थोडी है। लेकिन वे लोग भाग्यहीन हैं जो उसकी दया के पात्र नही हैं और दान अथवा नाम में आस्था नही रखते।

गुरु नानक ने भक्त की तुलना उस पत्नी से की है जो तन-मन से सर्वदा पति की सेवा मे प्रस्तुत रहती है। जो लोग वाह्याचार से भक्त दीखते हैं और अन्दर से दोषो से भरे हुए हैं, उनके लिए गुरु नानक कहते हैं—

हम लोग बातें करने मे अच्छी हैं लेकिन हमारा आचरण बुरा है। यद्यपि हमारा वाह्यरूप गोरा (निष्कलुष) है परन्तु हमारा अन्तःकरण काला (बुराइयो से युक्त) है। हम लोग उनसे स्पर्द्धा करती हैं जो भगवान के द्वार पर हर समय प्रस्तुत रहकर सेवा करती हैं और अपने पति रूपी परमेश्वर से एकात्म भाव अनुभव करती हैं। इससे हमारे अन्तःकरण मे हीन भावना उत्पन्न होती है। अतः वही जीवन उत्तम है जो भगवान के साथ मिलने में सहायक होता है।

[12] वणजु करहु वणजारिहो वखरु लेहु समालि।
तैसी वसतु विसाहीयै जैसी निब है नालि।
अगै साहु सुजाणु है लैसी वसतु समालि॥
भाई रे रामु कहहु चितु लाइ।
हर जसु वखरु लै चलहु सहु देखै पतिआई॥

गुरु नानक ने मनुष्य की व्यापारी, ससार की व्यापार-स्थल और अच्छे कर्मों की व्यापार की वस्तुओ से तुलना करते हुए कहा है—

हे व्यापारी (ससार मे रहने वाले मनुष्य), अपनी वस्तुओं (कर्मों) को संभाल। केवल वैसी ही वस्तुओ का व्यापार कर (वैसे ही कर्म कर) जो तेरे साथ निभ सकें। आगे शाह (भगवान) बहुत गुणी है। वह वस्तुओं को फौरन पहचान लेगा (तुम्हारे कर्मों की अच्छाई-बुराई को भगवान तत्काल समझ लेगा)। अत हे भाई, मन लगाकर राम का नाम लो। भगवान की महिमा रूपी पूंजी को साथ लेकर चलो ताकि महान व्यापारी (भगवान) उसे देखकर प्रसन्न हो।

[13] नदीया होवहि धेवणा, सुभ होवहि दुधु घीऊ।
सगली धरती सकर होवै, खुशी करे नित जिऊ।
परवतु सोना रूपा होवै हीरे लाल जड़ाऊ।
भी तू है सालाहणा आखण लेहै न चाऊ॥

9] पापां बाझहु होवै नाही
मुइयाँ साथ न जाई ।

धन-सम्पत्ति को गुरु नानक अग्राह्य मानते थे क्योकि उनके अनुसार उसको सगृहीत करने के लिए अनेक पाप, अपकर्म करने पडते हैं जिनके बिना वह प्राप्त नही होती और मृत्यु होने पर वह साथ नही जाती; अत. उसका अर्जन करना व्यर्थ है ।

[10] किसु कारणि ग्रिह तजिऊ उदासी ।
किसु कारणि इह भेखु निवासी ।
किसु वखर के तुम वणजारे ।
क्यूकरि साथु लघावहु पारे ।
गुरमुखि खोजत भये उदासी ।
दरसन कै ताई भेख निवासी ।
साच वखर के हम वणजारे ।
नानक गुरमुखि उतरसि पारे ॥

तुम्हारे घर का परित्याग कर साधु हो जाने का क्या कारण है ? तुमने यह वेश क्यो धारण किया है ? तुम किस वस्तु का व्यापार करते हो ? और किस प्रकार का साथ तुम्हे इस भवसागर से पार उतारेगा ?

उपरोक्त प्रश्नों के उत्तर मे गुरु नानक कहते हैं—मैं गुरु (भगवान) की खोज मे उदासीन (साधु) हो गया हूँ तथा उसके दर्शनो के लिए इस वेश को धारण किया है । मैं सत्य का व्यापारी हूँ और भगवद्भक्तों का साथ मुझे इस भवसागर से पार उतारेगा ।

[11] गल्ली असी चगियां आचारी बुरिआह ।
मनहु कुसुधा कालिया बाहरी चिट वीआह ।
रीसा करहि बिनडीया जो सेवहि दरु खडीआह ।
नालि खसमै रतीया माणहि सुखि रलिआह ।
होदै ताणि निताणीया रहीह निमानणिआह ।
नानक जनमु सकारथा जो तिन कै संग मिलाह ।

लसकर सर्णं दमामियां छुटे बंक द्वार।
नानक ढेरी छारु की भी फिरि होई छार।

मनुष्य-जीवन की क्षणभंगुरता को निर्देशित करते हुए गुरु नानक कहते हैं—मृत्यु सूरत, तिथि और वार नही पूछती। कुछ लोगो ने अपना बोझ लादना बन्द कर प्रयाण कर दिया है, कुछ अपना बोझ लाद चुके हैं और चलने को तैयार हैं और अन्य अभी तक अपनी वस्तुओ को एकत्रित कर रहे हैं। कुछ जाने को तैयार हैं और कुछ को जाने की सूचना मिली है। अपने सामान सहित फौजें और सुन्दर फाटको वाले महल पीछे छूट गए है। हे नानक! यह शरीर मिट्टी का ढेर है जो फिर मिट्टी मे ही मिल जाता है।

[16] हुकमी होवनि आकार, हुकमु न कहिया जाई।
हुकमी होवनि जीय, हुकमि मिलै वडियाई।
हुकमी उत्तमु नीच हुकमि लिखि दुख सुख पाइअहि।
इकना हुकमी बखसीस इकि हुकमि सदा भवाइअहि।
हुकमै अंदरि सभु को बाहरि हुकम न कोय।
नानक हुकमै जो बुझै न हउमे कहे न कोय।

भगवान की इच्छा का वर्णन करना किसी मनुष्य का कार्य नही है। सारी सृष्टि उसी की अभिव्यक्ति है, उसी की आज्ञा से हम जीते है और प्रतिष्ठा प्राप्त करते हैं। उसी की आज्ञा से हम ऊँच और नीच होते है और सुख अथवा दु ख पाते है। कोई उसके आशीर्वाद मे डूबे रहते हैं तथा अन्य सासारिकता की चकाचौंध मे फँसे रहते हैं। सब उसकी आज्ञा के अन्दर बधे हैं, उससे कोई भी स्वतत्र नही है। यदि कोई मनुष्य सर्वशक्तिमान की इस इच्छा को समझ ले तो उसमे 'तुम' और 'मैं' का भेद-भाव मिट जाए।

[17] जूठि न रागी जूठि न वेदी। जूठि न चद सूरज की भेदी।
जूठि न अन्नी, जूठो न नाई। जूठि न भीहू वरियै सब थाई।
जूठि न धरती, जूठी न पाणी। जूठि न पौणी माहि समाणी।
नानक निगुरिया गुणु नाही कोई। मुहि फेरियै मुहु जूठा होई।

अपवित्रता (झूठ) न तो रागो मे है न वेदों मे ही और न सूर्य, चन्द्र और ऋतु परिवर्तन मे ही। यह अन्न अथवा स्नान मे भी निहित नही

राम नाम जप की महिमा का वर्णन करते हुए गुरु नानक कहते हैं—यदि नदियाँ गायों के समान दूध से भरी हों, यदि सारे झरने दूध और घी से भर कर बहते हों, यदि सारी धरती चीनी होकर नित्य मेरे लिए प्रसन्नता प्रदान करती हो और यदि मेरे लिए सारे पर्वत सोने के हो जायें और उनमें हीरे मोती और लाल जड़े हों तब भी जो आनन्द मुझे राम नाम की महिमा के गायन से प्राप्त होता है, वह इन सबसे नहीं होगा।

[14] अमृत नामु सदा सुख दाता अंते होइ सखाई।
बाझु गुरु जगतु बउराना नावै सार न पाई।
सतिगुर सेवहि से परवाणु जिन जोती जोति मिलाई।
सो साहिबु सो सेवकु तेहा जिसु भाणा मंनि वसाई।
आपणै भाणै कहु किनि सुखु पाइआ अंधा अंधु कमाई।
बिखिआ कदे ही रजै नाही मूरख भुख न जाई।
दूजै सभु को लागि विगुता बिनु सतिगुर बूझ न पाई।
सतिगुर सेवे सो सुखु पाए जिस नो किरपा करे रजाई।

राम नाम रूपी अमृत सदैव सुख देने वाला है और अन्त समय में सखा की तरह साथ देता है। बिना गुरु के सारा जगत बावला है और नाम स्मरण के महत्व को नहीं समझता। सतगुरु की सेवा करने से एक समय ऐसा आता है जब ज्योति से ज्योति मिल जाती है। जो भगवान की इच्छा को सदैव मन में धारण करता है वही सच्चा सेवक है। जो लोग अपने मन के झुकाव के अनुसार चलते हैं उन्हें कभी आराम नहीं मिलता क्योंकि एक अंधे को अंधेपन के अलावा और कुछ प्राप्त नहीं होता। जिस प्रकार मूर्ख की क्षुधा कभी शांत नहीं होती, उसी प्रकार विषयों के भोग से कभी तृप्ति नहीं होती। सतगुर के अलावा दूसरों के पीछे चलने से दुःख की प्राप्ति होती है क्योंकि सच्चा गुरु ही शान्ति प्रदान करता है। जो भगवान की सेवा करता है वह उसकी इच्छा के अनुसार प्रसन्नता को प्राप्त करता है।

[15] मरणि न मूरतु पुछिया पुछी थिति न वारु।
इकनी लदिया इकि लदि चले इकनी बधे भार।
इकना होई साखती इकना होई सार।

कैसी आरती होइ भवखंडना तेरी आरती।
अनहृता सबद बाजत भेरी ॥

गुरु नानक कहते हैं कि—ससार के बधनो को तोडने वाले भगवान की निरन्तर आरती हो रही है। इस आरती मे आकाश रूपी थाल मे सूर्य और चन्द्र रूपी दीपक तथा तारिका-मडल रूपी मोती है। सुगन्धित मलयानिल रूपी धूप है, पवन रूपी चँवर है और सारा वन खड फूल प्रस्तुत करता है। आरती के समय बजने वाली भेरी अनहद नाद है।

[21] मोती त मदर ऊसरहि रतनी न होहि जडाऊ।
कसतूरि कगु अगरि चंदनि लीपि आवै चाऊ।
मत देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाऊ।
हरि बिनु जीउ जलि बलि जाऊ।
मैं अपणा गुरु पूछि देखिया अवरु नाही थाऊ।

भगवान का स्मरण रत्नों से जडे मोतियो के महल मे भी जो कस्तूरी, केसर, अगरु और चन्दन से युक्त हो—नही भूलना चाहिए। इन्द्रियो के लिए सुखप्रद होते हुए भी राम नाम बिना आत्मा विनष्ट हो जाती है। मैंने अपने गुरु को पूछ के देख लिया है। भगवान के अतिरिक्त और कोई भी आश्रय स्थल नहीं है।

[22] दइआ कपाह सतोखु सूतु जतु गंठी सतु वटु।
ऐह जनेउ जीअ का हई त पाडे घतु।
ना ऐहु तुटै न मलु लगै ना ऐह जलै न जाइ।
धन सु माणस नानका जो गलि चले पाइ।

ब्राह्मण द्वारा जनेऊ धारण करने के लिए कहने पर गुरु नानक ने कहा कि हे ब्राह्मण! यदि कोई ऐसा पवित्र जनेऊ हो जिसके लिए दया रूपी कपास, सतोष रूपी सूत तथा जीवन को सयमित रखने वाली सत्य रूपी गाठ लगी हो तो मुझे दे, क्योकि इस प्रकार का जनेऊ ना तो टूटेगा, ना उसमे कलुष लगेगा, ना यह जलेगा और नाही यह नष्ट होगा। इस जनेऊ को पहनने वाला मनुष्य धन्य होगा।

है। वर्षा मे भी अपवित्रता नही है क्योकि वह सर्वत्र होती है। पृथ्वी, जल और वायु भी अपवित्र नही है। हे नानक ! जिनके कोई गुरु नही है, जो निर्गुण है और जो भगवान से मुँह फेर लेते हैं उन्ही मे अपवित्रता प्रवेश करती है।

[18] लबु कुत्ता कूड़ु चूहड़ा ठगि खाधा मुरदार।
पर निन्दा पर मलु मुख सुधि अगनि कोप चंडाल।
रसकस आपु सलाहणा ऐ कर्म मेरे करतार ॥

अपनी-आत्म निन्दा करते हुए गुरु नानक कहते हैं—हे मेरे निर्माता, मैं लालच रूपी कुत्ते, झूठ रूपी भगी और मुर्दा खाने वाले की चालाकी जैसे दुर्गुणो से युक्त हूँ। दूसरे की गन्दगी के समान पर-निन्दा मेरे होठो पर विद्यमान रहती है। क्रोध रूपी चाण्डाल की अग्नि से मैं जल रहा हूँ। इन सबके होते हुए भी मैं सदैव आत्म-प्रशसा मे निमग्न रहता हूँ। यही मेरे कर्म हैं।

[19] जे करि सुतकु मन्नीये समतै सूतकु होइ।
गोहे अतै लकडी अन्दरि कीडा होइ।
जेते दाणे अन्न के जीआ वाझु न कोई।
पहिला पाणी जीऊ है जितु हरिया सभु कोइ।
सूतकु क्यूँ करि रखीऐ सूतकु पवै रसोइ।
नानक सूतक ऐव न उतरै गिआन उतारे धोइ ॥

यदि तुम सूतक को मानो तो सब जगह सूतक विद्यमान है। गोबर और लकडी के अन्दर कीडा रहता है। प्रत्येक अन्न के दाने मे जीवन है। सबसे पहले पानी मे जीव है जिससे सब हरा-भरा रहता है। यदि इन सबका सूतक मानो तो सर्वप्रथम रसोई मे सूतक हो जाएगा। गुरु नानक कहते हैं कि सूतक इस प्रकार नही उतर सकता, यह केवल सत्य ज्ञान से ही दूर हो सकता है।

[20] गगन मै थालु रवि चदु दीपक बने तारिका मडल जनक मोती।
धूपु मलयानलो पवणु चंवरो करे सगल बनराइ फूलत जोती।

[29] साचा साहिब साचे नाऐं ।

सच्चा ईश्वर सत नाम के माध्यम से ज्ञात होता है ।

[30] आप पछाने हर मिले ।

जो आत्मा को पहचान लेता है, वह ईश्वर के दर्शन पा लेता है ।

[31] अनहद राता एक लिवतार, ओह गुरमुख पावे अलख अपार ।

जो निर्बाध ध्यान के द्वारा उस सर्वशक्तिमान मे रत है, वही उस अगम्य और अनन्त ईश्वर को प्राप्त कर सकता है ।

[32] घट घट अन्तर ब्रह्म लुकाया, घट घट जोत समाई ।
बजर कपाट मुक्ते गुरमति निर्भय ताडी लायी ।।

ईश्वर प्रत्येक मन मे छिपा हुआ है । उसका प्रकाश सर्वत्र है । उसके दुर्भेद्य कपाट उसी व्यक्ति के लिए खुलते हैं, जो गुरुवाणी के जरिए उस परम-पिता का ध्यान करता है ।

[33] सूचै भाँडे साच समावे ।

ईश्वर केवल शुद्धात्मा मे निवास करता है ।

[34] सुच होवै ताँ सच पाइये ।

ईश्वर की प्राप्ति आत्मा की पवित्रता से ही होती है ।

[35] होमैं जाई तां कन्त समाई ।

जब 'अहम्' चला जाता है तो मनुष्य ईश्वर में विलीन हो जाता है ।

[36] होमे दीर्घ रोग है ।

'अहम्' एक गहरी जड़ वाला रोग है ।

[37] भरिये मत पापा के सग, ओह थोपै नावें के रंग ।

जब मन पाप से दूषित हो जाता है तो वह सतनाम के प्रेम से ही शुद्ध होता है । सतनाम ही जीवन का अमृत है जो सच्चा और स्थायी जीवन प्रदान करता है; और इसके विना जीवन निरर्थक है ।

।नगुणु गाहक गुणु वेचीयै तऊ गुणु सहघो जाइ।
गुण का गाहक जे मिले तऊ गुण लाख बिकाइ।
गुण ते गुण मिलि पाइयै सतिगुर माहि समाइ।
मोल अमोल न पाईयै वणजि न लीजे हाटि।
नानक पूरा तोलु है कवहुँ न होवै घाटि।

यदि तुम गुणो के मूल्य को न समझने वाले ग्राहक को गुण वेचोगे तो वे वहुत ही सस्ते विकेंगे। यदि गुण का सही ग्राहक मिल जाए तो वही गुण लाखो का विक जाएगा। यदि तुम अपने गुणो को ऐसे व्यक्ति से प्राप्त करो जिसमे स्वय वे सब गुण विद्यमान है तो तुम सच्चे गुरु के साथ एकाकार हो जाओगे। गुरु नानक कहते हैं कि यदि तुम पूरा तोलोगे तो कभी घाटा नही पड सकता।

[24] हृदय सच ऐ करनी सार, होर सब पाखड पूज खुआर।

सही धार्मिक अनुष्ठान वह है, जिसके द्वारा सत्य मन में पैठ जावे, क्योकि अन्य सभी कुछ दम्भमात्र है और पूजा निरर्थक है।

[25] सच्चो उरे सब को ऊपर सच आचार।

सत्य सबसे ऊपर है किन्तु सत्य आचरण उससे भी श्रेष्ठ है।

[26] मन मन्दर तन वेस कलन्दर।

मन को मन्दिर बनाले और शरीर को सन्यासी की पोशाक पहना ले।

[27] मन जीते जग जीत।

मन को जीतने से तू सारे ससार को जीत लेगा।

[28] गुरमुख मन अस्थाने सोई, गुरमुख तिरभवन सोझी होई।

जो गुरु के सहारे से मन वश मे कर लेता है वह तीनों लोकों का सार जान लेता है।

प्रत्येक व्यक्ति सुख चाहता है, दुःख कोई नही चाहता, फिर भी सुख की खोज मे ज्यादा दु.ख मिलता है किन्तु स्वार्थी मनुष्य यह नही जान पाता। जब मन मे सतनाम बस जाता है, तो सच्चा सुख प्राप्त होता है; तब मनुष्य सतुलित रहता है और सासारिक सुख-दुःख उसके लिए बराबर हो जाते है।

[46] सुख मागत दुःख आगल होये।
सगल बिकारी हार परौये एक बिना झूठे मुक्त ना होये॥

मनुष्य सुख की इच्छा करता है किन्तु उसे घोर दु ख प्राप्त होता है और इस चक्कर मे वह पापो की माला गूंथता जाता है। ईश्वर के बिना सब झूठा है, उसके बिना मुक्ति नही।

[47] रोग बुझै सो काटे पीरा।

जो रोग की जड जान लेता है, वह अपने कष्टों से छुटकारा पा लेता है।

[48] बैदा वैद सो वैद तू पहला रोग पछान,
ऐसा दारू लोड लहौ जिन बन्जे रोगाधारण।
जित दारू रोग उठीऐ तन सुख वसै आये,
रोग गवाऐ आपना ता नानक वैद सदायै।

ओ वैद्य, अगर तू सच्चा वैद्य है तो पहले रोग को ढूँढ़ और फिर ऐसा इलाज तलाश कर जो सब व्याधियो को दूर करता हो और सदा के लिए रोग नष्ट करता हो और जिससे शरीर को चिरस्थायी आराम पहुँचे।

[49] वैद बुलाया वैदगी पकड ढंढोले बाह।
भोला वैद ना जानइ कर्क कलेजे माहि॥

रोग निदान हेतु वैद्य बुलाया जाता है और वह नब्ज टटोलता हैकिन्तु वह अनाडी वैद्य यह नही जानता कि रोग तो मन मे है जो ईश्वर की इच्छा रखता है।

[50] सभ को ऊंचा आखियै, नीच ना दीसै कोय।

सबको ही उच्च मानो क्योकि मुझे कोई भी नीच नही दीखता।

[38] बिन नावे क्या जीवना, फिट ध्रिग चतराई।

सतनाम बिना जीवन दूषित है तथा सारी चतुराई व्यर्थ है।

[39] सरब रोग का औषध नाम।

सतनाम सब रोगो को ठीक करता है।

[40] नानक बिरथा कोय ना होये, ऐसी दरगै साचा सोये।

नानक कोई सच्चे हृदय की प्रार्थना अकारण नही जाती—ईश्वर का न्यायालय ही ऐसा है।

[41] जिसनु आप खोआये कर्ता खुश लऐ चगिआई।

ईश्वर जिसका विनाश करना चाहता है, उसका चरित्र पहले नष्ट करता है।

[42] हौं क्या मागो किछ थिर ना रहाई, मै दीजै नाम प्यारी जीओ।
ओह, मैं क्या मागू जब सब कुछ क्षणभगुर है।

[43] ऐ जी क्या मागो किछ रहे ना दीसे, इस जग मे
आया जाई।
नानक नाम पदार्थ दीजे हिरदै कंठ बनाई॥

अरे भाई, मैं क्या मांगू जब कोई भी वस्तु स्थिर नहीं है और जब इस ससार मे जन्म केवल मृत्यु के लिए है। हे ईश्वर, तू मुझे अपना नाम बख्श दे जिसे मैं हृदय मे धारण करूँगा और जिह्वा से उच्चारण करता रहूंगा।

[44] हृदय नाम नही मन भग, अनदिन नाल प्यारे सग।

जिसके हृदय मे ईश्वर का वास है, उसका मन कभी विचलित नहीं होता। वह रात-दिन ईश्वर की छत्रछाया मे निवास करता है।

[45] सुख को मागै सबको दुख ना मागै कोय।
सुखै को दुख अगला मनमुख बूझ ना होये॥
सुख दुख सम कर जानिये शब्द भेद सुख होय।

[56] घाल खाये किछ हथो देय, नानक राहु पछानें सेय ।

जो जीविकोपार्जन के लिए कार्य करते हैं और उसमे से परोपकार मे भी खर्च करते हैं, वे ही सत्पथ के ज्ञाता हैं ।

प्रत्येक प्रकार का श्रम पवित्र है, यदि वह कर्त्तव्य की दृष्टि से और सेवा भावना से किया जाय ।

[57] गुरमुख सभ वापार भला जे सहजे कीजै राम ।

प्रत्येक कार्य उत्तम है, यदि वह सही ढंग से किया जाय ।

[58] सेव कीती सन्तोखई जिनी सच्चो सच घियाया ।

सच्ची सेवा उन्ही की है जो सतोषी हो और ईश्वर मे विश्वास रखते हो ।

[59] चिव दुनिया सेव का कैमईये ता दरगैह बेसरण पाइये ।

इस संसार मे मानव सेवा करने से ही स्वर्ग मे स्थान मिल सकता है ।

[60] जो लोन्डीदे राम सेवक सेई काढ्या ।

सच्चे सेवक वे हैं जो मानव सेवा मे ईश्वर को ढूढते है ।

[61] विन सेवा फल कबहु ना पावस, सेवा करणी सारी ।

सेवा बिना फल सम्भव नही है । सेवा ही एक महान् उपलब्धि है ।

[62] मिठत नीवी नानका गुरण चगिआईया तत् ।

माधुर्य और विनम्रता ही सब अच्छाइयो और गुणो का सार है ।

[63] पढ्या मरख आखियै जिस लब लोभ अहकार ।

एक विद्वान् भी मूर्ख है यदि वह लोभ, दंभ तथा दुरभिलाषाओ का दास है ।

[51] आपे पट्टी कलम आप ऊपर लेरव भि तूं ।
एको कहियै नानका दूजा काहे कू ।।

वही पट्टी है, वही लेख है और वही कलम है । नानक, यह कहना चाहिए कि वही सब कुछ है, दूसरा हो भी कैसे सकता है ।

[52] सबको ऊंचा आखियें नीच ना दीसै कोय ।
इकनै भाडे साजिऐ इक चानण तेह लोये ।

सब ही को उच्च मानो, कोई भी मुझे नीच नहीं लगता, क्योंकि सबका कर्त्ता एक है और तीनो लोको मे उसका प्रकाश व्याप्त है ।

[53] जानो जोत ना पूछो जाती आगे जात न हे ।

मनुष्य का मूल्य उसकी जाति से नहीं, उसके आध्यात्मिक दृष्टिकोण से आंको क्योकि परलोक मे जातिभेद है ही नही । उन्होने लोगो को बताया कि न तो जन्म से, न जाति से, न लिंग-भेद से और न भाषा से, बल्कि गुणो और कार्यों से मनुष्य का समाज मे स्थान आंका जाता है ।

[54] नीचा अन्दर नीच जात नीची हूँ अत नीच ।
नानक तिनके संग साथ बड्या सयो क्या रीस ।
जिथै नीच समालियन तिथै नदर तेरी बखसीस ।

नानक सदा क्षुद्र जाति के भी सबसे क्षुद्र मनुष्य के साथ रहेगा, उसे तथाकथित उच्च जाति के मनुष्यो से क्या करना है । ईश्वर की कृपा उन पर रहती है, जो क्षुद्र मनुष्यो की सेवा करते हैं ।

[55] जात बरन कुल सहसा चूका गुरमुख सबद विचार ।

गुरुवाणी के सहारे मैंने जाति, रग और वर्ग की भावना से छुटकारा पा लिया है ।

[64] जैसे जल मे कमल निरालम मुरगाई नीसाणे।
सुरत शबद भव सागर तरियै नानक नाम बखाणै ।।

जैसे कमल जल से निर्लिप्त रहता है अथवा जैसे बतख धारा मे निश्चिन्त तैरती रहती है, वैसे ही मनुष्य सतनाम के उच्चारण से और मन मे ईश्वर की प्रतिष्ठा करने से ससार सागर को पार कर लेता है।

[65] हाटी बाटी नीद ना आवे परघर चित ना डोलाई।
बिन नावै मन टेक ना टिकई नानक भूख ना जाई ।।

मनुष्य को समाज मे रहते हुए या उससे दूर होने पर गाफिल नही होना चाहिए और न ही दूसरो की दौलत या शान को देखकर कर्त्तव्य-विमुख होना चाहिए। जहा भी कोई हो, बिना सतनाम के मन वश मे नही होता है और न इच्छा-निरोध होता है ।

[66] जैसा करे सो तैसा पावै, आप बीज आपे ही खावै।

जो जैसा करता है वैसा भरता है।

[67] रिद्ध सिद्ध अवराह साद।

जिसका आध्यात्मिकता से प्रेम हो जाता है, उसका मन भौतिक शक्तियो से हट जाता है।